आगरा विश्वविद्यालय के नवीन पाठ्यक्रमानुसार
बी० कॉम कक्षाओं के निमित्त

भारत में
व्यापार प्रशुल्क एवं यातायात
(TRADE TARIFF & TRANSPORT)

प्रथम खण्ड

लेखक
श्री एस० आर० रैलन बी० कॉम० (आनर्स) (बरमिंघम)
उप-प्रधानाचार्य तथा अध्यक्ष वाणिज्य विभाग
एस० डी० कॉलिज, कानपुर
एवं
तांत्रिक सलाहकार, चेम्बर आव कामर्स उत्तर प्रदेश

प्रकाशक
अर्थ वाणिज्य प्रकाशन मन्दिर
आगरा

मूल्य २॥)

प्रकाशक—
रामशरण बंसल
अर्थ वाणिज्य प्रकाशन मन्दिर
छीपीटोला, आगरा।

प्रथम संस्करण
१९५२

मुद्रकः—
श्री भुवनेश्वर दयाल अग्रवाल
बी० एस० सी०
दयाल प्रेस, छीपीटोला, आगरा

दो शब्द

गत कुछ वर्षों से आगरा विश्वविद्यालय ने अपने परीक्षार्थियों को हिन्दी में उत्तर लिखने की जो स्वतन्त्रता दे दी है उससे मातृभाषा हिन्दी के प्रेमियों को अपार सुख मिला, साथ ही राष्ट्रभाषा हिन्दी की जो उन्नति हुई और भविष्य में होगी वह किसी से छिपी नहीं। इस विश्वविद्यालय का एक दूसरा कदम भी सराहनीय है। वह यह कि अब १९५३ से बी० कॉम० की परीक्षा दो भागों में हुआ करेगी। अध्ययन के विषय भी देश की आवश्यकताओं के अनुसार बदल दिये गये हैं। व्यापार एवं यातायात बी० कॉम० का एक अनोखा विषय है, जिसका महत्त्व भारत की वर्तमान प्रगति के प्रकाश में आँकना सहज नहीं। इस विषय पर अभी कोई प्रथक पुस्तक नहीं और विशेषकर हिन्दी की पुस्तकों में तो कहीं भी इसकी विस्तार से चर्चा नहीं की गई है। इस अभाव को दूर करने के लिये तथा विद्यार्थियों की सुविधा की दृष्टि से यह पुस्तक लिखी गई है।

इस पुस्तक का प्रथम खण्ड (व्यापार एवं प्रशुल्क विभाग) अभी प्रकाशित हो रहा है द्वितीय खण्ड (यातायात विभाग) भी अतिशीघ्र प्रकाशित हो जायगा। समयाभाव के कारण यह खण्ड प्रणाली अपनाई गई है।

प्रस्तुत पुस्तक के लिखने में लेखक ने निम्न पुस्तकों एवं पत्र-

पत्रिकाओं से विशेष सहायता ली है। लेखक उनसे सम्बन्धित महानुभावों का आभारी है:—

Trade & Industry In Modern India—Vakil & Bose.

India's Foreign Trade—Ganguli.

Indian Economics—Dewett & Singh.

Tariffs Industry—J. Mathai.

India's Fiscal Policy—Adarkar.

भारत में अंग्रेजी राज्य—सुन्दरलाल

भारतीय अर्थशास्त्र की रूपरेखा—श्री शंकर सहाय सक्सेना

Review of the Trade of India (Latest Edition.)

Report of the Fiscal Commission, 1950.

India's Five Year Plan—Draft Outline.

The Statistical Abstract.

N.P.C. on Trade.

Commerce.

Eastern Economist.

The Indian Year Book 1950.

यद्यपि यह पुस्तक विशेषकर विद्यार्थियों के लिये ही लिखी गई है, किन्तु हमें पूर्ण विश्वास है कि व्यापारीगण भी इससे विशेष लाभ उठा सकेंगे।

—लेखक

पुस्तक की एक झलक

परिच्छेद	प्रथम खण्ड: व्यापार तथा प्रशुल्क	पृष्ठ
१.	विषय प्रवेश (Introduction):— विषय का महत्व; भारत का प्राचीन व्यापार; व्यापार के प्रमुख प्रकार एवं भारत में उनका महत्व ।	१– १५
२.	भारतीय व्यापार के विकास का संक्षिप्त इतिहास (A Brief History of the Development of Indian Trade):— हिन्दुओं के शासनकाल का व्यापार; मुसलमानों के शासनकाल का व्यापार; अंग्रेजों के शासनकाल के प्रारम्भिक वर्षों का व्यापार; स्वेज नहर का निर्माण एवं भारतीय व्यापार (१८६४-१९१४); प्रथम महायुद्ध के समय का व्यापार (१९१४-१९); प्रथम महायुद्ध के उपरान्त का व्यापार (१९१९-२९); घोर मन्दी के युग का व्यापार (१९२९-३३); मन्दी के बाद का व्यापार (१९३३-१९३९); द्वितीय महायुद्ध के समय का व्यापार (१९३९-१९४५); द्वितीय महायुद्ध के उपरान्त का व्यापार, भारतीय व्यापार की वर्तमान स्थिति ।	१६– ३५

परिच्छेद   प्रथम खण्ड: व्यापार तथा प्रशुल्क   पृष्ठ

३. भारतीय व्यापार की कुछ विशेषतायें (Some Special Features of India's Trade):— ३६- ५०

युद्ध युग के पूर्व की विशेषतायें (१६३६ से पूर्व); युद्ध युग की विशेषतायें (१६३६-४५); युद्ध युग के बाद (१६४५ से आज तक) की विशेषतायें ।

४. भारत के व्यापार की दिशा एवं उसके प्रमुख आयात निर्यात—१ (Direction of India's Trade & Her Principal Imports And Exports) :— ५१- ६५

व्यापार की दिशा का अर्थ; भारत एवं यू० के० के मध्य व्यापार; भारत व संयुक्त राज्य अमेरिका के मध्य व्यापार; भारत और कनाडा के बीच व्यापार; भारत और आस्ट्रेलिया के बीच व्यापार; भारत और मध्यपूर्व के देशों में व्यापार; भारत और सुदूर पूर्व के देशों में व्यापार; भारत और इन्डोनेशिया के बीच व्यापार ।

५. भारत के व्यापार की दिशा एवं उसके प्रमुख आयात निर्यात—२ (Direction of India's Trade & Her Principal Imports And Exports) :— ६६- ७८

भारत के प्रमुख आयात एवं निर्यात—आयात, निर्यात, निर्यात सम्बन्धी नवीन आँकड़े ।

परिच्छेद प्रथम खण्ड: व्यापार तथा प्रशुल्क पृष्ठ

६. भारत-पाकिस्तान व्यापार (Indo-Pakistan Trade):— ७६– ९२

भारत का बँटवारा एवं उसके परिणाम; भारत व पाकिस्तान के बीच पहला समझौता; द्वितीय व्यापारिक समझौता, १९४९; भारतीय रुपये का अवमूल्यन; नेहरू लियाकत पैक्ट एवं तृतीय व्यापारिक समझौता १९५०; भारत पाक समझौता, १९५१।

७. राज्य की आयात एवं निर्यात नीति (Government Import & Export Policy) :— ९३–१०१

द्वितीय महायुद्ध के काल में विदेशी व्यापार पर राजकीय नियन्त्रण; युद्धोत्तरकाल में व्यापार का लाइसेन्सिङ्ग; आयात व्यापार का लाइसेन्सिङ्ग; ओपन जनरल लाइसेन्स नीति के बुरे परिणाम; आयात नीति १९५२; निर्यात नीति, इम्पोर्ट इन्क्वायरी कमेटी रिपोर्ट १९५०।

८. व्यापार का सन्तुलन एवं उसे अनुकूल बनाने के उपाय (The Balance of Trade & The Means to Make It Favourable):—१०२–११५

भूमिका; १९५१-५२ में व्यापार का सन्तुलन; व्यापार के सन्तुलन की प्रतिकूलता के कारण; व्यापार की दशा सुधारने के लिये सरकारी प्रयत्न; निर्यात बढ़ाने के अन्य साधन;

परिच्छेद प्रथम खण्ड: व्यापार तथा प्रशुल्क पृष्ठ

६. प्रशुल्क नीति (Fiscal Policy):— ११६–१२६

व्यापार व उद्योग के लिये संरक्षण के लाभ; संरक्षण से हानियाँ; भारत में प्राशुल्किक स्वतन्त्रता का प्रारम्भ; विवेचनात्मक संरक्षण; संरक्षण की आलोचना; द्वितीय महायुद्ध के बाद की स्थिति; प्रशुल्क मण्डल (१६४६-५०) के सुझाव।

परिशिष्ट

१०. विविध विचार (A few Miscellaneous Reflections) :— १३०–१३६

भारत व अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार संघ; हवाना चार्टर का उद्देश्य तथा उसकी प्रमुख बातें; प्रशुल्क एवं व्यापार सम्बन्धी सामान्य समझौता; साम्राज्य अधिमान; भारत का व्यापार और पंचवर्षीय योजना।

भारत में व्यापार प्रशुल्क एवं यातायात
(Trade Tarrif & Transport)

पहला परिच्छेद
विषय-प्रवेश

विषय का महत्व (Importance of the Subject)-

भारत आज अपने भाग्य के चौराहे पर खड़ा हुआ है। यह सत्य है कि २६ जनवरी, १९५० से यह देश सम्पूर्ण सत्ता सम्पन्न जनतंत्रीय राष्ट्र बन गया है, किन्तु वास्तव में भारतवासियों की आर्थिक दशा अभी उतनी उज्ज्वल और आकर्षक नहीं हुई है जैसी कि वह एक युग में थी। दासत्व की जंजीरों से छुटकारा पाये हुए हमें अभी चन्द ही दिन हुए हैं। स्वतंत्रता तो अवश्य मिली किन्तु विभाजन रूपी नागिन ने हमारी स्वतंत्रता के सुख को विषमय भी कर दिया है। देश के बँटवारे के दुष्परिणाम एक नहीं अनेक हैं। बँटवारे की समस्या के अतिरिक्त देश के सम्मुख अनेक उलझनें और भी हैं जिनके सुलझाने में हमारे नेतागण तन, मन, धन से लगे हुये हैं। यद्यपि बाहर से हमारी समस्यायें राजनैतिक प्रतीत होती हैं, परन्तु वास्तव में हैं वे आर्थिक ही। मुख्य समस्या तो देश वासियों के जीवन स्तर को ऊँचा करने की है। भारत की राष्ट्रीय आय (National Dividend) बड़ी न्यून है। डाक्टर वी. के. आर. वी. राव के अनुमान के अनुसार भारत में प्रति व्यक्ति की औसत आय १९३१-३२ में ६५ रु० थी, जब कि संयुक्त-राष्ट्र अमेरिका में १०४६ रु० और ब्रिटेन (U. K.) में ९८० रु० थी। यही नहीं यह न्यून सम्पत्ति भी राष्ट्र के समस्त व्यक्तियों में

उचित रूप से विभाजित नहीं थी और न आज ही है। श्री राव के अनुमान के अनुसार ५% से भी कम व्यक्ति इस सम्पत्ति के एक तिहाई भाग का, लगभग ३३% दूसरे एक तिहाई का और शेष ६२% बची हुई ३३% सम्पत्ति का उपभोग करते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में ६०% से अधिक व्यक्तियों की वार्षिक आय १८ रु० से अधिक न थी। १९४८ में ईस्टर्न इकानोमिस्ट (Eastern Economist) द्वारा किये हुये अनुमान के अनुसार भारत की प्रति व्यक्ति आय २२३ रु० है। १९५१ की जन-गणना के अनुसार यह आय सम्भवतः २२५ है। किन्तु १९३१-३२ की तुलना में आजकल वस्तुओं के मूल्य भी अठगुने हो गए हैं, अतः २२५रु० की वार्षिक आय कोई सन्तोष का विषय नहीं। कृषि, व्यापार, उद्योग और यातायात के सम्बन्ध में भी देश ने कोई प्रशंसनीय प्रगति नहीं की, यद्यपि भारत में विकास के साधन प्रचुर मात्रा में विद्यमान हैं। यहाँ उपभोग की वस्तुएं (Consumer Goods) आवश्यक मात्रा में उत्पन्न नहीं होतीं, अतएव उनको मंगाने के लिये प्रतिवर्ष हमको हजारों रुपया व्यय करना पड़ता है। थोड़े शब्दों में भारत के व्यापार के लिये हम यह कह सकते हैं कि व्यापार का संतुलन (Balance of Trade) हमारे पक्ष में नहीं है। हाँ, पिछले दो साल से इसकी दशा विपरीत है।

अतः आज आवश्यकता राष्ट्र के आर्थिक ढांचे की नींव को सुधारने की है। सुधार एवं आर्थिक पुनर्निर्माण (Economic Reconstruction) का कार्य अन्य राष्ट्रों के सहयोग के बिना होना असम्भव है और अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सम्बन्ध को निभाने का सर्वश्रेष्ठ मार्ग व्यापार है। अतएव व्यापार तथा इससे सम्बन्धित अन्य विषय (जैसे उद्योग, अर्थ, प्रशुल्क, यातायात इत्यादि) का अध्ययन अत्यन्त आवश्यक तथा राष्ट्र के हित में है। यही नहीं किसी देश की सच्ची आर्थिक स्थिति जानने

के लिये भी तीन "टीज" (The three T's:-Trade, Tarrif and Transport)का अध्ययन बड़ा महत्व रखता है। आइये, भारत के वर्तमान व्यापार से सम्बन्धित स्थिति की जानकारी के पूर्व, हम भारत के प्राचीन व्यापार की झाँकी करें।

भारत का प्राचीन व्यापार

(Ancient Trade of India)

प्राचीन युग में भारतवर्ष सब राष्ट्रों का शिरोमणि था। आदि काल से ही प्रायः प्रत्येक सभ्य देश से भारत का व्यापारिक सम्बन्ध रहा है। इतिहास इसका साक्षी है। लगभग ३,००० वर्ष पहिले भारत और बेवीलोन में व्यापार होता था। ईसा से २,००० वर्ष पुरानी मिश्र देश की ममीज, अति सुन्दर भारतीय मलमल में लिपटी हुई पाई गई है। इससे प्रत्यक्ष सिद्ध है कि भारत और मिश्र में व्यापारिक सम्बन्ध था और यहाँ की कला पूर्ण वस्तुऐं मिश्र को जाती थीं। यही नहीं प्राचीन ग्रीस, रोम अरब, फारस और चीन से भी भारत के अच्छे व्यापारिक सम्बन्ध थे। एल्डर लिनी इस बात का समर्थन करता है कि रोम में भारत निर्मित वस्तुओं की बहुत खपत थी। औद्योगिक कमीशन की रिपोर्ट में पंडित मालवीय ने अपने मतभेद सूचक नोट (Note of Dissent) में ऐसा लिखा है कि यूनान के निवासी भी ढाका की मलमल से परिचित थे और वे उसे "गेजिटिका" के नाम से पुकारते थे। ईसा की १५ वीं सदी में यूरोपियन यात्री काउन्टी लिखता है कि जितने बड़े जहाज भारत में बनते थे उतने बड़े यूरोप में नहीं दीख पड़ते थे। इससे भी भारत के प्राचीनतम् व्यापार की झलक मिलती है। श्री काउन्टी आगे लिखते हैं कि बंगाल से सिन्ध तक का व्यापार केवल भारतीय जहाजों द्वारा किया जाता था। पूरब में

मैक्सिको (अमेरिका) तक और पच्छिम में इंगलिस्तान तक भारत का बना माल भारतीय जहाजों में लाद कर भेजा जाता था‡। अंग्रेजों के भारत आने के सहस्त्रों वर्ष पूर्व भारत के बने हुये कपड़े और अन्य माल भारत के बने हुए जहाजों में जाकर चीन जापान, लंका, ईरान, अरब, कम्बोडिया, मिश्र, अफ्रीका, इटली, मैक्सिको आदि संसार के समस्त सभ्य देशों में बिकता था।* बारबोसा लिखता है कि सत्रहवीं सदी के प्रारम्भ में गुजरात के बने हुये कपड़े अफ्रीका और पेगू तक जाते थे। वारथेमा लिखता है कि भारत उन दिनों गुजरात, समस्त ईरान, तातार, टर्की, श्याम, बारबरी, अरब, ईथियोपिया (अबीसीनिया-अफ्रीका) और अन्य कई देशों को अपने यहाँ के बने हुये रेशमी व सूती कपड़ों को भेजा करता था। उस समय के यात्री लिखते हैं कि स्वयं भारत के अन्दर कपड़े की खपत मामूली नहीं थी। पुर्तगाली यात्री पिरार्ड लिखता है कि सत्रहवीं सदी के शुरू में बंगाल के अन्दर, जो अत्यन्त घना बसा हुआ देश था, सूती वस्त्रों का धंधा घर घर फैला था, और आशा अन्तरीप (अफ्रीका) से लेकर चीन तक प्रत्येक स्त्री पुरुष सर से पाँव तक कपड़े पहिनते थे और वे सब कपड़े भारतीय करघों से बुने हुये होते थे। उस समय के भारत के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के बारे में प्रसिद्ध अंग्रेज इतिहासकार डा० रार्बर्टसन सन् १८१७ में लिखता है: —

"हर युग में सोना और चाँदी (विशेषकर अन्तिम वस्तु) दूसरे देशों से हिन्दुस्तान भेजी जाती थी। इसमें भारतवर्ष को बहुत लाभ था। पृथ्वी का कोई और भाग ऐसा नहीं है जहां के

‡"India at the death of Akbar", Page 67-71

* भारत में अंग्रेजी राज्य—लेखक श्री सुन्दरलाल, पृष्ठ ८७७।

लोग अपने जीवन की आवश्यकताओं या अपने ऐश आराम की चीजों के लिए दूसरे देशों पर इतने कम निर्भर हों। ईश्वर ने भारतवासियों को अत्यन्त उपयुक्त जलवायु दिया है। उनकी भूमि अत्यन्त उपजाऊ है और फिर वहाँ के लोग अत्यन्त दक्ष हैं......... इन सब बातों के कारण हिन्दुस्तानी अपनी समस्त इच्छाओं को पूरा कर सकते हैं। परिणाम यह है कि बाहरी संसार का उनके साथ सदा एक ही ढंग से व्यापार होता रहा है अर्थात् उनके यहाँ के अद्भुत, प्राकृतिक तथा हाथ के बने हुए माल के बदले में कीमती धातुएँ उन्हें दी जाती रही हैं।"*

एक अन्य स्थान पर यही लेखक लिखता है कि हजरत ईसा के जन्म के समय से उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ तक भारत के साथ अन्य देशों का व्यापार बराबर इसी ढंग का बना रहा।‡

प्राचीन युग में विदेशी व्यापार मुख्यतः मूल्यवान वस्तुओं (जैसे महीन कपड़ा, मूल्यवान धातु, हाथी-दांत का सामान, रंग, इत्र, मसाले आदि) में ही होता था। भारत विदेशों को जितने मूल्य का माल भेजता था, उससे कम मूल्य का माल वह मंगाता था और इस प्रकार जो अन्तर रह जाता वह सोना तथा चाँदी मंगा कर पूरा किया जाता था। भारत में विदेशों से आने वाली वस्तुओं में सीसा, पीतल, टिन, शराब और घोड़े प्रमुख थे। एक बहुत बड़ी मात्रा में सोना आयात किया जाता था, जिससे यह स्पष्ट है कि देश का निर्यात (Exports) आयात से कई गुना अधिक था और सच तो यह कि भारत के व्यापार की यह सदैव से ही एक विशेषता रही है।

* भारत में अंग्रेजी राज्य—सुन्दरलाल, पृष्ठ ८७६।

‡ A Historical Disquisition Concerning India, new edition (London 1817), Page 180.

विदेशी व्यापार के अतिरिक्त, एन्ट्रीपोट व्यापार* (Entrepot Trade) में भी भारत प्राचीन काल से भाग लेता आया है। 'एन्ट्रीपोट' व्यापार की मुख्य वस्तुयें रेशमी कपड़ा, चीनी का सामान, जवाहरात, मोती, काँच का सामान और मसाला थीं।

प्राचीन भारत के विदेशी तथा 'एन्ट्रीपोट' व्यापार के विवरण से देश के आन्तरिक व्यापार का भी अनुमान लगाया जा सकता है।

व्यापार के प्रमुख प्रकार एवं भारत में उनका महत्व

(Kinds of Trade & Their Significance for India)

भारत के व्यापार के चार मुख्य प्रकार हैं—

(१) आन्तरिक अथवा अन्तरदेशीय व्यापार।

(२) समुद्र तटीय व्यापार।

(३) विदेशी अथवा वाह्य व्यापार एवं,

(४) 'एन्ट्रीपोट' अथवा पुन, निर्यात व्यापार।

भारत के लिये आन्तरिक अथवा अन्तर्देशीय व्यापार का महत्व—

(Importance of Internal Trade for India)

जब से कृषि, उद्योग और यातायात के साधनों में आविष्कार हुए हैं, तब से विश्व के विभिन्न देशों के व्यापार में आशातीत

---

*'एन्ट्रीपोट व्यापार' से आशय पुनः निर्यात (Re-export) का है, अर्थात् विदेशों से आये हुए माल को पुनः अन्य देशों को निर्यात कर देना। ऐसे व्यापार के लिए दो देशों के मध्य में किसी देश की भौगोलिक स्थित ऐसी होनी चाहिए कि जिससे इस प्रकार का व्यापार सरलता से सम्भव हो सके। इस दृष्टिकोण से भारत की स्थिति बड़ी सुन्दर है। पूर्वीय भूमण्डल के मध्य में स्थित होने के कारण पूर्व और पश्चिम के बीच होने वाले व्यापार के लिये वह एक सर्वश्रेष्ठ विश्राम स्थल है।

उन्नति हुई है। औद्योगिक क्रान्ति का जन्म सर्व प्रथम ग्रेट ब्रिटेन में हुआ और तत्पश्चात् क्रान्ति की बेल केवल योरुप के अन्य देशों में ही नहीं वरन् विश्व के दूसरे भागों में भी फैल गई। बड़ी मात्रा में वस्तुओं का उत्पादन शुरू हो गया, जिसके परिणाम स्वरूप व्यापारी और उद्योगपति अतिरेक वस्तुओं (Surplus Commodities) के विक्रय के लिये विदेशों में बाजार खोजने लगे। विश्व में विशिष्टीकरण (Specialisation) भी बढ़ने लगा। एशिया और अमेरिका (जो कि खाद्य पदार्थ तथा कच्चे माल के भण्डार हैं) से कच्चे माल तथा खाद्य पदार्थों का निर्यात शुरू हो गया और बदले में इन देशों में निर्मित वस्तुओं का आयात होने लगा। इस प्रकार विश्व के प्रायः सभी देश दो खंडों में विभाजित हो गये: एक, कच्चे माल तथा खाद्य पदार्थों का निर्यात करने वाले, और दूसरे, निर्मित वस्तुओं का व्यापार करने वाले। एक देश की दूसरे देश पर निर्भरता आज भी दिखलाई पड़ती है। ग्रेट-ब्रिटेन तथा जापान अधिकांश रूप में कच्चे माल का आयात करते हैं और उसको अपने कुशल श्रम तथा मशीनरी द्वारा वस्तुओं में परिणित करके विदेशों को निर्यात कर देते हैं। इस प्रकार विदेशी व्यापार ही इन देशों का प्राण है। इसके बिना वे फल फूल नहीं सकते। यही नहीं, इनका जीवन ही उस पर निर्भर है। यदि अन्य देश इनको कच्चा माल देना बन्द कर दें तो इनकी आर्थिक स्थित डांवाडोल हो जाय और यह भी सम्भव है कि वहाँ के रहने वाले लोग भूखों मरने लगें।

किन्तु भारत की दशा इन देशों से बिल्कुल भिन्न है। उक्त दृष्टिकोण से यदि भारतवर्ष की तुलना किसी देश से की जा सकती है तो वह है संयुक्त राज्य अमेरिका। भारतवर्ष का आन्तरिक व्यापार अपने विदेशी व्यापार से कई गुना है। भारतवर्ष

के प्राकृतिक साधन, क्षेत्रफल एवं इसकी सम्पत्ति तथा जन-संख्या को दृष्टि में रखते हुए यदि उसे एक उप-महाद्वीप कहा जाय तो वह कोई अतिशयोक्ति न होगी। भारतवर्ष की जन संख्या बहुत अधिक और विस्तृत है, अतः उसका आन्तरिक बाजार भी बहुत बड़ा है, इसलिये यह आशा करना कि यातायात तथा संदेशवाहन के साधनों की प्रगति और बड़ी मात्रा के उद्योगों की उन्नति के साथ साथ उसका अन्तर्देशीय व्यापार काफी बढ़ेगा, कोई दुराशा नहीं।

दुर्भाग्य की बात है कि अभी तक भारत के अन्तर्देशीय व्यापार की ओर यथेष्ट ध्यान नहीं दिया गया। पिछले वर्षों में जितनी भी विदेशी जातियों का अधिकार यहाँ पर रहा उन्होंने सदैव विदेशी व्यापार को ही प्रमुख स्थान दिया, क्योंकि उसमें उनका स्वार्थ सिद्ध होता था। भारतीय रेलों की भाड़ा नीति (Indian Railway Rates Policy) ने भी अन्तर्देशीय व्यापार की अपेक्षा बाहरी या विदेशी व्यापार (External Trade) को ही अधिक प्रोत्साहन दिया। अभी थोड़े समय से ही हमारे देश के अर्थशास्त्री आन्तरिक व्यापार की ओर अधिक ध्यान देने लगे हैं। सम्पूर्ण देश में एक युक्तिपूर्ण नीति के अनुसार उत्पादन और वितरण के साथ-साथ विभिन्न प्रादेशिक भागों (Regional Units) के मध्य व्यापार के लिये प्रोफेसर के० टी० शाह ने बहुत जोर दिया है।* प्रोफेसर सेन का कथन है कि "भारत के उत्पादकों और वस्तु निर्माताओं के लिये देश के अन्दर ही काफी बड़ा बाजार है और यदि उचित रूप से उसकी उन्नति की जाय तो विदेशी बाजारों पर हमारी निर्भरता बहुत कुछ कम हो सकती है [२]।"† प्रोफेसर नायडू एक स्थान पर लिखते हैं कि

*1. K.T. Shah—"Principles of Planning," Page 91·92

†2. "India has a home market for local producers and

"भारत के समान सर्व सम्पन्न देश बड़ी सरलता से बाहरी व्यापार को न्यून करके अपने अन्तर्देशीय व्यापार को बढ़ा सकता है।"*

भारतवर्ष के आन्तरिक व्यापार का विदेशी व्यापार की अपेक्षा देश के आर्थिक जीवन में बड़ा स्थान है, किन्तु अभी तक आन्तरिक व्यापार के सम्पूर्ण और विश्वसनीय आँकड़े हमारे देश में सुलभ नहीं हैं। रेलवे के आँकड़ों (Railway Statistics) के आधार पर भी इस सम्बन्ध में कोई उपयुक्त निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता, क्योंकि रेलों के द्वारा जितना सामान ले जाया जाता है, वह प्रायः व्यापार की विद्यमान परिस्थितियों तथा रोड सर्विसिज की प्रति-स्पर्धा पर निर्भर होता है। फिर यह भी ठीक ज्ञात नहीं कि अन्तर्देशीय व्यापार का कितना अंश रेलों के द्वारा किया जाता है। राष्ट्रीय योजना समिति (National Planning Committee—N P. C.) की व्यापार सम्बन्धी उप-समिति के अनुसार भारत का आन्तरिक व्यापार ७,००० करोड़ रुपये से कम नहीं है, जबकि विदेशी व्यापार केवल ५०० करोड़ रुपये का है। यह अनुमान १९४० में लगाया गया था। सम्भव है कि बाद में मुद्रा स्फीत, आर्थिक प्रतिबन्ध आदि के कारण आन्तरिक व्यापार की मात्रा में कुछ परिवर्तन हुआ हो। कुछ भी हो, किन्तु विदेशी और अन्तर्देशीय व्यापार की तुलना से एवं भारत की अपार प्राकृतिक सम्पत्ति, घनी आबादी, पनपते हुये उद्योग धन्धे और मनहर

---

manufacturers, which if properly developed, would reduce our dependence on foreign markets to the minimum"—Prof. Sen in 'Economic Reconstruction for india', Page 364.

* 3. Prof. Naidu in "Industrial Problems of India," edited by Shri P. C. Jain, Page, 123.

पद्ममयी प्राकृतिक बनावट को देखकर यह डँके की चोट कहा जा सकता है कि भारत का आन्तरिक व्यापार अनुपात में बहुत ही अधिक है और भविष्य में उससे अधिक आशायें की जा सकती हैं । अन्तर्देशीय व्यापार की एक साधारण झलक रेलवे ट्रैफिक तथा रेलवे की आय से भी मिलती है। सन् १६४६ में क्लास-अ रेलों के लगभग ५२ लाख वैगन लादे गये थे, और बँटवारे के बाद १६४६ में लगभग ६१ लाख लादे गये—अर्थात् सन १६४६ में १७% वैगन और बढ़ गये। सवारी तथा माल दोनों के द्वारा रेलों की आय सन् १६४६ में २४२ करोड़ रुपये हुई जब कि १६४६ में वह केवल २१५ करोड़ रुपया ही थी। इससे भी आन्तरिक व्यापार का बढ़ता हुआ महत्व प्रगट होता है। इसके अतिरिक्त सन् १६३८-३६ में लगभग ६०० करोड़ की वस्तुओं का व्यापार नदी द्वारा हुआ।

उक्त बातों के अतिरिक्त आज के भारत में तो ऐसे अनेक परिवर्तन हो गये हैं कि जिनके कारण आन्तरिक व्यापार की दशा और भी सुधर गई है। बँटवारे के पूर्व भारत में लगभग ६०० देशी रियासतें थीं जो भारतीय संघ के क्षेत्रफल का ४ प्रतिशत भाग घेरे हुये थीं। इनमें चीजों के आवागमन तथा व्यापार सम्बन्धी अनेक प्रतिबन्ध थे, किन्तु अब भाग्यवश स्वर्गीय पटेल के पुरुषार्थ के फलस्वरूप ऐसे प्रतिबन्धों का प्रश्न ही जाता रहा, क्योंकि प्रायः सभी रियासतें या तो किसी प्रान्त में मिला दी गईं अथवा उनको मिलाकर एक अलग प्रान्त बना दिया गया। इससे आन्तरिक व्यापार को बड़ा प्रोत्साहन मिला है और हमें आशा ही नहीं, वरन् पूर्ण विश्वास है कि स्वतंत्र भारत की जन-प्रिय सरकार इस सुअवसर से पूर्ण लाभ उठा कर अन्तर्देशीय व्यापार को विकास की उस सीमा की ओर ले जायगी जहाँ कि विदेशी बाजारों पर हमारी निर्भरता कम से कम हो जाय।

देश में औद्योगीकरण की लहर तो है ही, फिर संदेशवाहन एवं यातायात के साधनों में जो उन्नति हो रही है, उससे भी भारत के भावी व्यापार की उन्नति की आशा कर सकते हैं। आन्तरिक व्यापार के महत्व को देखते हुये यह उन्नति आवश्यक भी है।

भारत के लिये समुद्र-तटीय व्यापार का महत्व—

(Importance of Coastal Trade For India)

समुद्र तटीय व्यापार के दृष्टिकोण से भी भारत की स्थिति बड़ी महत्वपूर्ण है। यह बात भारत की भौगोलिक स्थिति एवं २,५०० मील से भी अधिक लम्बे समुद्री किनारे से स्पष्ट है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि प्राचीन काल में भारतीय जहाजों द्वारा समुद्री व्यापार होता था। "सिकन्दर की फौजें जब लौटने लगीं तो २,००० जहाजों के बेड़े का उन्होंने अपनी समुद्री यात्रा के लिये उपयोग किया था। अकबर के शासन काल में ४०,००० जहाज तो केवल सिन्धु नदी के व्यापार में ही लगे हुये थे। जब वासको-डी-गामा प्रथम बार भारत में आया तो उसे यहाँ ऐसे नाविक मिले जो जल यातायात के विषय में उससे कहीं अधिक जानकारी रखते थे। उन्नीसवीं सदी तक भारतीय जहाज विदेशी और समुद्र तटीय व्यापार में अच्छा हिस्सा लेते रहे *।"

किन्तु दुर्भाग्य से, विदेशी शासनाधिकारियों ने इसके विकास की ओर नाम मात्र भी ध्यान नहीं दिया। बंटवारे के परिणाम स्वरूप समुद्र तटीय व्यापार को और भी क्षति पहुँची। जब बर्मा भी भारत का ही एक अंग था, तो भारत का उसके साथ बहुत सा समुद्र-तटीय व्यापार होता था। इसी प्रकार करांची के साथ का व्यापार भी अब समुद्र-तटीय नहीं रहा वरन् विदेशी हो गया है। अब तो केवल बम्बई, मद्रास, कलकत्ता आदि बन्दरगाहों

*"भारतीय अर्थशास्त्र की रूप रेखा" शंकर सहाय सक्सेना, पृष्ठ ३४०।

के मध्य का व्यापार ही समुद्र तटीय व्यापार की श्रेणी में आता है। इस प्रकार से अब देश का समुद्र तटीय व्यापार काफी कम होगया है। १९३९ में कुल समुद्र तटीय व्यापार का अनुमान ७० लाख टन के लगभग था, १९४९ में वह घट कर ५० लाख टन ही रह गया और आजकल तो वास्तविक समुद्र तटीय व्यापार की मात्रा ३० लाख टन से भी कम है। १९३९ में समुद्र तटीय व्यापार का केवल २५% भाग ही भारतीय जहाजों द्वारा आया जाया करता था। भारत के समुद्र तटीय व्यापार की उन्नति के लिये श्री एस. एन. हाजी ने अनेक प्रयत्न किये, किन्तु वे असफल रहे। भाड़ा सम्बन्धी द्वन्द और विदेशी प्रतिस्पर्धा के कारण भारतीय जहाजी कम्पनियाँ भी कोई प्रशंसनीय उन्नति न कर सकीं। द्वितीय महायुद्ध ने भारत की सरकार को एक सुदृढ़ जल सेना बनाने तथा अपने व्यापारिक समुद्री बेड़े (Mercantile Marine) की उन्नति के लिये विवश किया।

भारत के समुद्र तटीय व्यापार के विकास में एक दोष यह भी है कि हमारा समुद्री किनारा लगभग २,५०० मील लम्बा होते हुये भी यहाँ अच्छे बन्दरगाहों की कमी है। पश्चिमी किनारा वर्ष में ३—४ माह के लिये मानसूनी हवाओं की तेजी के कारण बेकार रहता है; कच्छ तथा केम्बे की खाड़ी एवं बम्बई का भाग अवश्य प्रयोग के योग्य रहता है। पूर्वी किनारे पर मद्रास और विजगापट्टम ही दो बन्दरगाह हैं जो कृत्रिम (artificial) बने हुये हैं और व्यापार के लिये भले नहीं कहे जा सकते। कलकत्ते का बन्दरगाह समुद्र तट से बहुत दूर स्थित है। जैसा अभी कह चुके हैं, बंटवारे के बाद करांची एक विदेशी बन्दरगाह हो गया है। भारत से करांची के अलग होने के फलस्वरूप बम्बई पर व्यापार का भार बहुत बढ़ गया है। उसको कम करने की दृष्टि से हमारी लोक प्रिय सरकार ने कुछ नये बन्दरगाह बनाये हैं, और इस

सम्बन्ध में अनेक दूसरी योजनायें भी हैं। नये बन्दरगाहों में से कान्डला, ओखा और मंगलौर प्रमुख हैं। कान्डला का बन्दरगाह कच्छ की खाड़ी पर स्थित है और यह यथार्थ में "भारत का करांची" बनेगा। कान्डला दिल्ली से केवल ६५६ मील दूर है। ओखा काठियावाड़ का बन्दरगाह है। वह वर्ष में बारहों महीने प्रयोग किया जा सकेगा। विजगापट्टम के विकास के लिये भी हमारी सरकार पूर्ण प्रयत्नशील है और पूर्ण आशा है कि यह "पूर्व का बम्बई" बनेगा। विजगापट्टम मद्रास और कलकत्ते के मध्य में स्थिति है और प्रायः मध्य प्रदेश प्रान्त की चीजों का निर्यात करता है। यह जहाज उद्योग (Shipping Industry) का भी केन्द्र है। विकास के इस दिग्दर्शन के साथ यह कहना अनावश्यक न होगा कि सन् १६३६ में भारत में केवल ३० जहाज थे, किन्तु अब हमारी राष्ट्रीय सरकार ने इस ओर सुधार के हेतु भी कदम उठाया है। सन् १६४८ में ही हमारे देश में दो जहाज, "जल-ऊषा" और "जल प्रभा" भी बने एवं अनेक अन्य जहाजों का निर्माण हो रहा है। सरकार ने तीन जहाजी प्रमण्डल (Shipping Corporation) बनाने का निश्चय कर लिया है, जिनमें से प्रत्येक की पूंजी १० करोड़ रुपया होगी। सरकार ने स्वयं ५% पूंजी देने का वचन दिया है। ये प्रमण्डल विदेशी व्यापार में भाग लेंगे। विदेशी जहाजी प्रमण्डलों से अनुचित प्रतिस्पर्धा तथा भाड़ा सम्बन्धी द्वन्द (Rate-Wars) को दूर करने के लिये भी राष्ट्रीय सरकार ने वचन दिया है। यह एक स्पष्ट सत्य है कि स्वतंत्र भारत के लिये एक विशाल एवं सुदृढ़ व्यापारिक जहाजी बेड़े की बड़ी आवश्यकता है। हमारी वर्तमान प्रगति एवं भावी योजनाओं से यह स्पष्ट है कि वह दिन दूर नहीं जबकि भारत का समुद्र तटीय व्यापार पुनः उन्नति के शिखर पर पहुँच जायगा।

भारत के लिये विदेशी व्यापार का महत्व—
(Importance of External Trade For India)

भारत के प्राचीनतम विदेशी व्यापार की झांकी हम कर ही चुके हैं। उससे यह स्पष्ट है कि भारत विदेशी व्यापार में सब देशों का शिरोमणि रहा है। विश्व के प्रायः प्रत्येक सभ्य देश से हमारे व्यापारिक सम्बन्ध रहे और आज भी हैं। जैसा कि हम पहले कह आये हैं, अन्तराष्ट्रीय आर्थिक सम्बन्ध को निबाहने के लिये विदेशों से व्यापार ही एक सर्व श्रेष्ठ मार्ग है और फिर आज तो विदेशी व्यापार की बड़ी ही आवश्यकता है। कारण लिखते हुये दुख होता है कि सन् १९४८ में हुये भारत के विभाजन ने हमारे देश का बड़ी आर्थिक क्षति पंहुचाई। खाद्य पदार्थ तथा कुछ आवश्यक कच्चे माल (जैसे कपास और जूट) के लिये हम अन्य देशों पर निर्भर हो गये—अतएव अपनी इस क्षति को पूरा करने क लिये हमें विदेशी व्यापार का सहारा लेना ही पड़ेगा। अपने खाये हुये यश को पुनः स्थापित करने के लिये भारत को अपने विदेशो व्यापार की उन्नति करनी ही होगी।

भारत के लिये 'एन्ट्रीपोट' व्यापार का महत्व—
(Importance of Entrepot Trade For India)

विश्व के पूर्वी और पश्चिमी भागों से व्यापार के लिये भारत की स्थिति बड़ी महत्वपूर्ण है। लंका, चीन तथा पूर्वी द्वीप समूहों से यूरोप जाने वाली वस्तुयें प्रायः भारत रुक कर ही जाती हैं। उसी प्रकार योरोप से आने वाली वस्तुयें भारत हो कर ही जाती हैं। तिब्बत, नैपाल, अफगानिस्तान आदि ऐसे देश हैं, जिनका कि अपना कोई समुद्र तट नहीं है। उनका आयात निर्यात प्रायः भारत के ही द्वारा होता है। बम्बई इस प्रकार के व्यापार का मुख्य केन्द्र है। ऊन और चमड़ा पश्चिम के देशों

को जाता है और वहाँ से शक्कर, चाय, मसाला, कपड़ा रासायनिक पदार्थ, कच्चा धातु आदि आता है। 'एन्ट्रीपोट' व्यापार का विदेशी व्यापार की अपेक्षा बहुत अधिक महत्व है। विदेशों से १९४८-४९ में ७·२९ करोड़ रुपये, १९४९-५० में १६.२६ करोड़ रुपये एवं १९५०-५१ में २७.८२ करोड़ रुपये का आया हुआ माल भारत से पुनः निर्यात हुआ। १९३९-४० में पुनः निर्यात केवल १० करोड़ रुपये का था।

दूसरा परिच्छेद

भारतीय व्यापार के विकास का संक्षिप्त इतिहास

(A Brief History Of The Development of Indian Trade)

भारतीय व्यापार* के विकास के इतिहास का अध्ययन करने के लिये उसे निम्न भागों में बाँटना उचित होगाः—

(१) हिन्दुओं के शासन काल का व्यापार ;
(२) मुसलमानों के शासन काल का व्यपार ;
(३) अंग्रेजों के शासन काल के प्रारम्भिक वर्षों का व्यापार ;
(४) स्वेज नहर का निर्माण और भारतीय व्यापार (१८६४-१९१४);
(५) प्रथम महायुद्ध के समय का व्यापार (१९१४-१९१९);
(६) प्रथम महायुद्ध के पश्चात का व्यापार (१९१९-१९२९):
(७) घोर मन्दी की अवधि का व्यापार (१९२९-१९३३);
(८) मन्दी के बाद का व्यापार (१९३३-१९३९);
(९) द्वितीय महायुद्ध के समय का व्यापार (१९३९-१९४५);
(१०) द्वितीय महायुद्ध के पश्चात का व्यापार ;
(११) भारत के व्यापार की वर्तमान स्थिति ;

आइये अब हम प्रत्येक युग के व्यापार का अलग अलग वर्णन करें।

---

* यहाँ भारतीय व्यापार से तात्पर्य मुख्यतया भारत के विदेशी व्यापार से है।

(१) हिन्दुओं के शासन काल का व्यापार

(Trade in the Hindu Period)

यह तो हम पहले ही बता चुके हैं कि ईसा से कई हजार वर्ष पूर्व भी भारत का विदेशों से व्यापारिक सम्बन्ध था। भारत का सुन्दर कपास तथा यहाँ के बने बढ़िया कपड़े, धातु तथा हाथी दाँत का सामान, इत्र, रंग, मसाले आदि चीन, जापान, मिश्र, रोम, अरब, परशिया आदि संसार के समस्त देशों में जाकर बिकते थे। विदेशों से भारत मुख्यतः शीशा, पीतल, टिन, कई प्रकार की शराबें और घोड़े मंगाता था। इनके अतिरिक्त भारत में बाहर से सोना और चांदी भी बड़ी मात्रा में आयात होती थी।

(२) मुसलमानों के शासन काल का व्यापार

(Trade in the Muslim Period)

मुगल साम्राज्य का समय भारत के इतिहास में निःसन्देह स्वर्ण युग था। धन धान्य और सुख सम्पत्ति की जा रेलपेल उस समय देखने में आती थी वह विश्व के इतिहास में शायद ही कभी किसी दूसरे देश को नसीब हुई हो। उस समय संसार की प्रायः सभी मण्डियों में भारत का बना हुआ माल दिखाई देता था। मुगलों के शासन काल में व्यापार अधिकतर उत्तर पच्छिम के स्थल मार्ग से होता था। इस व्यापार के दो मुख्य मार्ग थे एक तो लाहौर से काबुल का और दूसरा मुल्तान से कन्धार का। पूर्वी देशों और लाल सागर के बीच व्यापार के लिये मिलने का केन्द्र मलाबार का किनारा था और काबुल में भारत, फारस और दूसरे पड़ौसी देशों के व्यापारी आपस में मिला करते थे। कन्धार भारत से फारस जाने का प्रवेश द्वार था। भारत का विदेशी व्यापार भूमध्य सागर के किनारे तक होता था और वहाँ से योरुप के व्यापारी भारतीय माल को योरुप के अन्य देशों में ले जाकर

बेचते थे। किन्तु प्रारम्भ में भारतीय व्यापार से लाभ उठाने वाले केवल वेनिस और जनेवा के ही व्यापारी थे। अन्य देशों के व्यापारी उनको फूलते-फलते न देख सके। स्पर्धा के कारण और लाभ की उत्कंठा से अन्य व्यापारियों ने भी भारत से व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित किये। भारत से व्यापार करने के लिये नये नये मार्गों की खोज की एक लहर पैदा हो गई। पुर्तगाल के निवासियों ने केप-आफ-गुड-होप (Cape of Good Hope) होकर भारत पहुँचने का समुद्री मार्ग ढूँढ़ निकाला। इससे भारत का विदेशी व्यापार और भी बढ़ गया। व्यापार के नवीन मार्ग के ज्ञात होने के कारण योरुप के व्यापारियों में प्रतिद्वन्दता की भावना और भी भड़क उठी एवं इस प्रतिद्वन्दता के संघर्ष में अंग्रेजों की जीत हुई। व्यापार का एकाधिकार ईस्ट इंडिया कम्पनी (East India Company) को मिल गया। भारत उन दिनों लेनदार (Creditor) देश था और व्यापार तथा चुकारों (Payments) का संतुलन उसके पक्ष में था। उसका निर्यात आयात से कहीं अधिक था। निर्यात आयात का यह अंतर सोना तथा चांदी के आयात से पूरा किया जाता था*।

(३) अंग्रेजों के शासन काल के प्रारम्भिक वर्षों का व्यापार (Trade In The Early British Times)

मुसलमानों के शासन काल के अन्तिम दिनों में भारत तथा अन्य पूर्वी देशों के साथ व्यापार करने का एकाधिकार ईस्ट इन्डिया कम्पनी को प्राप्त हो गया था। प्रारम्भ में तो इस कम्पनी की नीति भारतीय व्यापार को बढ़ाने के लिए भारत के उद्योगों को

*Brij Narain— "India Before & Since the Crisis"— Volume I.

प्रोत्साहन देने की रही। १६वीं शताब्दी के प्रारम्भ तक भारत का बना हुआ तरह २ का माल (विशेषकर भारत के बने हुये सुन्दर कपड़े) इंगलिस्तान में जा कर बिकता था और खूब पसन्द किया जाता था। सुप्रसिद्ध अंग्रेज इतिहासकार लैकी[1] लिखता है कि १६८८ की अंग्रेजी राज्य क्रान्ति के पश्चात् जब मलिका मेरी अपने पति के साथ इंगलिस्तान आई तो "भारतवर्ष के रंगीन कपड़ों का शौक उसके साथ आया और तेजी के साथ हर श्रेणी के अंग्रेजों में फैलता गया"। वह आगे लिखता है "१७वीं शताब्दी के अन्त में बहुत बड़ी संख्या में भारत की सस्ती और बढ़िया कैलिको (Calico), मलमल और छींटें इंगलिस्तान में आती थीं और इतनी पसंद की जाती थीं कि इंगलिस्तान के [2] ऊनी और रेशमी कपड़े बनाने वालों को बहुत खतरा हो गया।

किन्तु बाद में, इंगलैन्ड के औद्योगिक विकास के फलस्वरूप वहां के पूंजीपतियों के दबाव से भारत के उद्योग धन्धों को नष्ट कर दिया गया और भारत उन्हीं वस्तुओं का आयात करने लगा, जिनको कि वह पहले बाहर भेजा करता था। भारत से योरुप को कच्चा माल जाने लगा और निर्मित माल वहाँ से आने लगा।

ईस्ट इंडिया कम्पनी के चरण जिस दिन से भारत में आये, यहाँ के उद्योग धन्धे अवनति की ओर जाने लगे। अत्याचार करके तथा अनेक कूटनीतियों के सहारे भारतीय उद्योगों को

1. Lecky's History of England in the 18th Century, vol. (ii), Page 158.

2. Ibid, vol. (ii), Pages 255-256 — Quoted by Shri Sunderlal in "भारत में अंग्रेजी राज्य" — Pages 877-878.

गिराया गया। इन अत्याचारों के विषय में ही सुप्रसिद्ध अंग्रेज तत्व वेत्ता हरबर्ट स्पेन्सर[1] ने लिखा है:—

"कल्पना कीजिये कि उन लोगों के कारनामे कितने काले रहे होंगे जब कि कम्पनी के डाइरेक्टरों तक ने इस बात को स्वीकार किया कि—भारत के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में जो अटूट धन कमाया गया, वह सब इस तरह के घोर अन्यायों और अत्याचारों द्वारा प्राप्त किया गया है कि जिससे बढ़कर अत्याचार और अन्याय कभी किसी देश या किसी युग में सुनने में भी न आये होंगे।

सन् १८१३ में तो यह बिलकुल निश्चय ही कर लिया गया था कि भारत के उद्योग धन्धों को नष्ट कर दिया जाय और इंगलैन्ड के व्यापार को बढ़ाने के लिये वहाँ का बना हुआ माल भारतवासियों के सिर बलात् मढ़ दिया जाय। जिस समय पार्लियामेंट में इस विषय पर बहस हो रही थी तो एक सदस्य मि० टीरने[2] ने अपने व्याख्यान में स्पष्ट कहा:—

"अब से सामान्य सिद्धान्त यह होगा कि इङ्गलिस्तान अपने यहाँ का बना हुआ माल बलात् भारत में बेचे और उसके बदले में भारत की बनी हुई एक भी वस्तु न ले। यह सच है कि हम रुई अपने यहां आने देंगे, किन्तु जब हमें यह पता लग गया है कि हम मशीनों के द्वारा भारतवासियों की अपेक्षा अधिक सस्ता कपड़ा बुन सकते हैं तो हम उनसे यह कहेंगे कि 'तुम बुनने का काम छोड़ दो और हमें कच्चा माल दो हम तुम्हारे लिये कपड़ा बुन देंगे'।

इसके अतिरिक्त इंगलैन्ड के व्यापार को बढ़ाने के ही उद्देश्य

---

1. Social Statistics, By Herbert Spencer, 1st Edition, Page 367.

2. Mr. Tierney in the House of Commons, 1813.

से इंगलिस्तान निर्मित माल पर महसूल घटा कर कुल कीमत का $2\frac{1}{2}\%$ कर दिया गया और कुछ विशेष वस्तुओं पर तो महसूल बिलकुल ही उड़ा दिया गया।* भारतीय व्यापार एवं उद्योग-धन्धों के सर्वनाश की यह शोकपूर्ण कथा अधिक न बढ़ा कर हम व्यापार के अगले युग में प्रवेश करते हैं।

(४) स्वेज नहर का निर्माण एवं भारतीय व्यापार

(The construction of the Suez Canal and the Indian Trade 864-1914)

स्वेज नहर का निर्माण १८६९ में हुआ और इस नवीन मार्ग के खुल जाने का भारत के विदेशी व्यापार पर बड़ा प्रभाव पड़ा है। भारत और योरुप के मध्य का फासला लगभग ५,००० मील कम हो गया। इसके परिणाम स्वरूप माल के आवागमन में अब कम समय लगने लगा। इंगलैंड की औद्योगिक क्रान्ति से भी भारत अछूता न रहा। यहां पर रेलों का प्रचार हुआ और यातायात के अन्य साधनों का भी विकास होने लगा। भारत के मुख्य बन्दरगाह अपनी पृष्ट भूमि से मिला दिये गये तथा बम्बई और स्वेज के बीच समुद्री तार से सम्बन्ध स्थापित हो गया। उस समय भारत में पूर्ण राजनैतिक शान्ति थी। आन्तरिक व्यापार में बाधा डालने वाले कर सम्बन्धी समस्त प्रतिबन्ध भी हटा दिये गये थे। इन सब बातों का परिणाम यह हुआ कि भारत का विदेशी व्यापार बहुत बढ़ गया। खाद्य पदार्थ और कारखानों के लिये कच्चा माल (जैसे कपास आदि) भारत से विदेशों को जाने लगा तथा विदेशी कारखानों के निर्मित पदार्थ, जैसे कपड़ा, मशीनरी, रेलवे का सामान, कांच का सामान, चाकू आदि, भारत में आने लगे। भारत का व्यापार मुख्यतः इंगलैंड, जर्मनी,

* C/f Replies to Mr. Larpent in Parliament, 1814.

अमेरिका और जापान के साथ होता था, किन्तु भारत के विदेशी व्यापार पर सबसे अधिक प्रभुत्व इंगलैंड का था। भारतीय व्यापार के इतिहास के इस युग में सन् १८६६-१६०४ तक कुल व्यापार ८६ करोड़ से २१० करोड़ रुपया हो गया, और १६०४-१४ तक यह ३७६ करोड़ हो गया।

(५) प्रथम महायुद्ध के समय का व्यापार

(Trade during the World War I–1914-1919)

प्रथम महायुद्ध के प्रारम्भ होने के समय तक भारत का विदेशी व्यापार काफी उन्नति पर था, किन्तु युद्ध के समय में उसमें कमी आने लगी। कमी के मुख्य कारण ये थे :— शत्रु राष्ट्रों के साथ व्यापार का बन्द होना, माल के आवागमन के लिये जहाजों की कमी तथा उसके फलस्वरूप मित्र राष्ट्रों के साथ भी व्यापार का कम होना; जहाजी किराये में वृद्धि इत्यादि। तटस्त देशों के साथ भी व्यापार कम हो गया था क्योंकि इस बात की शंका रहती थी कि कहीं उनके द्वारा शत्रु राष्ट्रों के पास हमारा माल न पहुँच जाय। इस अवधि के आयात निर्यात के आँकड़े इस प्रकार हैं:—

(१६१३-१४ के मूल्यों के आधार पर)
करोड़ रुपयों में

	आयात	निर्यात	योग
१६१३-१४	१८३	२४४	४२७
१६१८-१६	६३	१६०	२२३

युद्ध के अन्तिम वर्षों में मित्र राष्ट्र देशों में भारतीय माल की माँग बढ़ी और फलस्वरूप भारत के निर्यात में वृद्धि हुई। औद्योगिक दृष्टि से उन दिनों भारत पिछड़ा हुआ देश था, अतएवं जापान और अमेरिका ने भारत के इस युग के आयात निर्यात व्यापार में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया।

(६) प्रथम महायुद्ध के उपरान्त का व्यापार
(Trade of the Post War Period 1919-29)

प्रथम महायुद्ध के उपरांत भारत के विदेशी व्यापार में अनेक उतार चढ़ाव आये, जैसा कि निम्नांकित तालिका से स्पष्ट है:—

वर्ष	आयात	निर्यात	योग	व्यापार का संतुलन
१९१९-२०	२२२	३३६	५५८	+ ११४
१९२०-२१	३४७	२६७	६१४	— ८०
१९२१-२२	२८२	२४८	५३०	— ३४
१९२२-२३	२४६	३१६	५६२	+ ७०
१९२९-३०	२४९	३१८	५६७	+ ६९

उक्त तालिका से हम यह सार निकाल सकते हैं कि युद्ध के एकदम बाद तो निर्यात व्यापार काफी बढ़ा। बढ़ने के मुख्य कारण थे—युद्ध कालीन प्रतिबन्धों का हटना, जहाजी किराये का कम होना; मित्र तथा अन्य राष्ट्रों से भी बन्द व्यापार का पुनः आरम्भ होना आदि। किन्तु, जैसा कि तालिका से स्पष्ट है, यह स्थित शीघ्र ही समाप्त हो गई। निर्यात व्यापार फिर से घटने लगा। इसके कई प्रमुख कारण थे, जिन्हें नीचे दिया जा रहा है:—

(i) योरुप के देश निवासियों की क्रय शक्ति कम हो गई, इस कारण वे भारत का माल अधिक मात्रा में न खरीद सकते थे।

(ii) जापान, अमेरिका आदि की आवश्यकताएँ कम हो गईं क्योंकि वे पहले ही भारत का माल अधिक मात्रा में खरीद चुके थे।

(iii) भारत में वर्षा की कमी लगातार रही, जिसके कारण अनाज की कमी हो गई और भाव बढ़ गये—फलस्वरूप अनाज का निर्यात बन्द करना पड़ा।

(iv) जापान आर्थिक संकट में फँस गया, जिसके कारण उसकी क्रय शक्ति और भी कम हो गई थी एवं;

(v) भारतीय कपास का विदेशी मूल्य बढ़ गया था। इससे निर्यात में घोर कमी आ गई।

इसके विपरीत आयात व्यापार में वृद्धि होने लगी, क्योंकि रुपये का विदेशी विनिमय बढ़ जाने से उसको काफी प्रोत्साहन मिला। फिर युद्ध के कारण जो आयात रुक गया था, वह भी पुनः शुरू हो गया। परिणाम यह हुआ कि व्यापार का संतुलन भारत के प्रतिकूल रहने लगा। परन्तु धीरे २ निर्यात व आयात पुनः अपनी सामान्य स्थित में पहुँच गये और १९२३ के बाद तो स्थित काफी संतोषजनक हो गई जो १९२९ तक रही।

(७) घोर मन्दी के युग का व्यापार

(Trade during the Period of the "Great Depression"-1929-33.)

१९२९ के पश्चात् विश्व के विदेशी व्यापार की मात्रा घटने लगी। मन्दी का युग आया। इसके अनेक कारण थे। अपनी आर्थिक दशा को सुधारने के लिये प्रायः सभी देशों ने विदेशी व्यापार पर प्रतिबन्ध लगाना शुरू कर दिया। इस युग में सोने का वितरण भी बड़ा विषम हो गया था। संसार के कुल सोने का ६० प्रतिशत भाग संयुक्त राज्य अमेरिका तथा फ्रांस के पास था। अतः सोने की कमी के कारण अन्य देशों को विवश होकर मुद्रा का संकुचन करना पड़ा, जिसके परिणामस्वरूप चीजों के दाम गिरने लगे और मंदी आ गई। मंदी का एक अन्य कारण

कृषि के साधनों का यन्त्रीकरण (Mechanisation) किया जाना था। इसके फलस्वरूप कच्चे माल और निर्मित वस्तुओं का उत्पादन बहुत बढ़ने लगा। भारत कृषि प्रधान देश था अतएव यहाँ मंदी का रूप अत्यन्त भयंकर रहा। यद्यपि अन्य देश मुद्रा का संकुचन कर रहे थे तथापि भारत में रुपये का मूल्य १ शि० ६ पें० था। इससे भारत के विदेशी व्यापार को और भी हानि हुई। जापान ने अपने 'ऐन' (Yen) का मूल्य घटा दिया था और उसने अपने देश के मूल्य से भी सस्ते मूल्य पर भारत में अपनी चीज़ें बेचना शुरू किया; परिणाम यह हुआ कि भारत और जापान के बीच का व्यापारिक समझौता (Indo-Japanese Trade Convention) टूट गया। जापान ने भारत की कपास मंगाना भी बन्द कर दिया; इससे भारत के विदेशी व्यापार को और भी धक्का लगा। खाद्य पदार्थ तथा कच्चे माल का मूल्य निर्मित वस्तुओं के मूल्य की अपेक्षा बहुत कम हो गया, और इसका फल यह हुआ कि भारत का निर्यात आयात की अपेक्षा बहुत ही संकुचित हो गया। निर्यात तथा आयात के अन्तर को पूरा करने के लिये भारत को १९३०-१९३८ के बीच ३५० करोड़ रुपये के लगभग का सोना निर्यात करना पड़ा। इस विश्व मन्दी का प्रभाव १९३२ तक रहा।

(८) मन्दी के बाद का व्यापार

(Trade in the Recovery Period 1933-1939)

१९३३ से स्थिति सुधरने लगीं। इसके मुख्य कारण तीन थे—

(१) संयुक्त राज्य अमेरिका तथा अन्य प्रमुख देशों में सुधार योजनाओं (Recovery Plans) का बनना।

(२) कच्चे माल के उत्पादन पर प्रतिबन्ध का होना; और

(३) भावी युद्ध के भय के कारण युद्ध की सामग्री पर अधिक खर्चा होना।

१९३२ के "ओटावा पैक्ट (Ottawa Pact) के फलस्वरूप भी भारत का विदेशी व्यापार बढ़ने लगा। १९३४ में भारत तथा जापान के बीच एक समझौता (Indo Japanese Trade Agreement, 1934) हो गया, जिससे जापान से हमारे व्यापारिक सम्बन्ध फिर सुन्दर हो गये। कच्चे माल के दाम भी बढ़ गये, जिससे भारत का निर्यात और भी उन्नति कर गया। इस युग में औद्योगीकरण की दिशा में भी भारत ने थोड़ी प्रगति की।

भारत के निर्यात का अधिकतर भाग कामन वैल्थ के देशों को जाता रहा और अन्य देशों (जैसे जर्मनी, फ्रान्स, इटली, अमेरिका और जापान) का भाग हमारे निर्यात व्यापार में बराबर कम होता गया। कामन वैल्थ के देशों में सब से अधिक माल भारत से इंगलैंड को जाता था। किन्तु आयात व्यापार की स्थित भिन्न थी, कामन वैल्थ के देशों से कम माल आता था, और अन्य देशों (मुख्यतः जापान, जर्मनी, अमेरिका) से अधिक। १९२०-२५ में कामनवैल्थ के देशों का भाग ६५.४% था, और १९३५-४० में वह ५३.८% ही रह गया; जब कि अन्य देशों का हिस्सा उन वर्षों में ३४.६% से बढ़कर ४६.२% हो गया। इसका मुख्य कारण हमारी आयात सम्बन्धी बदली हुई आवश्यकतायें थीं। व्यापार का संतुलन साधारणतः हमारे पक्ष में ही रहता था।

(६) द्वितीय महायुद्ध के समय का व्यापार
(Trade During the Second World War-1939-1945)

३ सितम्बर, १९३९ को महायुद्ध घोषित होने के कारण, भारतीय विदेशी व्यापार की स्थित बदल गई। चीजों का मूल्य

बढ़ने लगा। विदेशों में भारत के कच्चे माल तथा निर्मित वस्तुओं की माँग भी बढ़ने लगी, परिणाम स्वरूप हमारा निर्यात बढ़ने लगा। निम्नांकित आँकड़े इस बात के साक्षी हैं।

भारत का विदेशी व्यापार (पुनर्निर्यात सहित)

(करोड़ रुपयों में)

वर्ष	आयात	निर्यात	योग
१६४०-४१	१५७	१८७	३४४
१६४१-४२	१७३	२३७	४१०
१६४२-४३	११०	१८७	२८७
१६४३-४४	११८	१६६	३१७
१६४४-४५	२०४	२१०	४१४

महायुद्ध के इस युग में भारत के आयात निर्यात पर राज्य का नियंत्रण स्थापित हो गया। जिन देशों में युद्ध हो रहा था (जैसे नार्वे, हालैण्ड, डेन्मार्क बेल्जियम और फ्रान्स) उनसे तो व्यापार बन्द हो गया, किन्तु बर्मा, मलाया, हिन्द चीन तथा सुदूरपूर्व के अन्य देशों व मध्य पूर्व के देशों से हमारा व्यापार बढ़ भी गया। मित्र राष्ट्रों में तो हमारे माल की खूब खपत होने लगी। १६४२-४३ के आयात निर्यात के आंकड़ों में कुछ विशेषता दिखलाई पड़ती है। इन दिनों भारत के आयात निर्यात दोनों ही कम हो गये, क्योंकि—

(i) आयात-निर्यात पर राजकीय नियंत्रण था। १६४२-४३ में व्यापार के उचित नियंत्रण के लिये ट्रेड कन्ट्रोलर्स (Trade Controllers) की नियुक्ति हुई थी जिनकी बिना आज्ञा के किसी भी प्रकार का आयात अथवा निर्यात सम्भव नहीं था। विशेष जांच (Scrutiny) के पश्चात् ही व्यापार के लिये लाइसेन्स (Licences) दिये जाते थे। कुछ व्यापारिक

संस्थाओं को, जिनके प्रति यह शंका थी कि वे कहीं शत्रुराष्ट्रों के सहायक न हों, विदेशी व्यापार की आज्ञा न दी गई।

· (ii) शत्रु राष्ट्रों से व्यापार बन्द हो गया—इसके अतिरिक्त कुछ मित्र राष्ट्रों (जैसे फ्रान्स एवं इटली) से भी व्यापार बन्द करना पड़ा, क्योंकि वहां युद्ध चल रहा था। १९४२-४३ के बाद जब बर्मा तथा आसाम में भी जापानी फौजें आ गई तो पूर्व के भी कुछ राष्ट्रों से व्यापार बन्द हो गया।

(iii) माल लाने ले जाने में जहाजों की कठिनाइयां, बढ़े हुये जहाजी किराये एवं आगोप व्यय के कारण भी विदेशी व्यापार में बड़ी कठिनाई उपस्थित हुई।

(iv) युद्ध की बढ़ी हुई आवश्यकताओं के कारण अमेरिका एवं इंगलैण्ड भी भारत को चीजों का निर्यात न कर सके अतः हमारे आयात इन दिनों विशेष कम हो गये।

उक्त परिस्थियों के फल स्वरूप भारत के विदेशी व्यापार की मात्रा कम हो गई; किन्तु जहां तक मूल्य का प्रश्न है, चीजों के दाम बढ़ जाने के कारण आयात और निर्यात दोनों में ही युद्ध के पहिले वर्षों की अपेक्षा युद्ध युग में वृद्धि आयात में कम और निर्यात में अधिक हुई, जैसा कि निम्नांकित आंकड़ों से स्पष्ट है-

आयात

	१९३९-४०	१९४०-४१	१९४१-४२	१९४२-४३	१९४३-४४
मात्रा	१०२·०	८१·३	७४·२	३७·६	३९·९
वृद्धि या कमी	+२·०	—२०·३	—८·७	—४९·३	+६·१
मूल्य का स्तर	१०६·४	१२६·७	१५३·४	१९२·९	१९५·५
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]

निर्यात

	१९३९-४०	१९४०-४१	१९४१-४२	१९४२-४३	१९४३-४४
मात्रा	१०४·५	८८·१	९३·७	६२·४	५३·८
वृद्धि या कमी	+४·५	—१५·७	+६·४	—३३·३	—१३·८
मूल्य का स्तर	११९·८	१३०·३	१५५·९	१८४·६	२२७·४
वृद्धि या कमी	+१९·८	+८·८	१९·६	+१८·४	+२८·७

उक्त आंकड़ों से यह बात सिद्ध होती है कि आयात और निर्यात पर राजकीय नियंत्रण की कड़ाई अथवा ढिलाई का सीधा प्रभाव पड़ता है–नियंत्रण कम होने पर विदेशी व्यापार की मात्रा बढ़ती है और इसके विपरीत यदि नियंत्रण अधिक हो तो मात्रा कम हो जाती है।

इस युग की एक अन्य महत्वपूर्ण बात यह है कि व्यापार का संतुलन १९४३-४४ तक बराबर हमारे पक्ष में ही बढ़ता गया। १९४०-४१ में संतुलन ५४ करोड़ और १९४२-४३ में ८८ करोड़ था। इसी के फलस्वरूप हमने स्टर्लिंग पावना (Sterling Balance) जमा कर लिया। इसके दो मुख्य कारण और भी थे:—

(अ) मित्र राष्ट्रों की फौजें युद्ध के कारण भारत में थीं। वे जो माल भारत से खरीदती थीं, उसके बदले में स्टर्लिंग मिलता था जो जमा होता गया।

(आ) दूसरे इंग्लैन्ड की सरकार से भारत को युद्ध का जो

खर्चा वापिस मिला, वह भी स्टर्लिंग पावने के रूप में ही जमा किया गया।

युद्ध युग में जिन वस्तुओं में विदेशी व्यापार होता था, उनमें भी काफी परिवर्तन हो गया। चाय और कपड़े का निर्यात बढ़ा तथा मूंगफली का निर्यात घटा क्योंकि देश में ही तेल उद्योग का विकास होने लगा था। थोड़े शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि भारत से निर्मित माल विदेशों को अधिक जाने लगा और आयात में कच्चे माल का अनुपात बढ़ा और तैयार माल का अनुपात घटा। नीचे दी हुई तालिका से यह बात स्पष्ट है—

आयात (करोड़ रुपयों में)

वर्ष	खाद्य पदार्थ	कच्चा माल	निर्मित पदार्थ
१६३८-३६	२४·००	३३·१८	८२·७६
	(१५·१७)	(२१·७)	(६०·८)
१६३६-४०	३५·२६	३६·१३	६१·८१
	(२१·४)	(२१·६)	(५५·५)
१६४०-४१	२३·८१	४२ १०	८६·५१
	(१५·२)	(२६·८)	(५७·०)
१६४१-४२	२७·८४	५०·०५	६३·६५
	(१६·१)	(२८·६)	(५४ १)
१६४२-४३	७·६२	५१·६५	४६·५२
	(६·६)	(४७·०)	(४४·८)
१६४३-४४	८·१३	६३·६४	४५·१२
	(६·८)	(५३·८)	(३८·०)
१६४५	२१·७५	१२८·०५	८४·४७
	(६·२)	(५४·०)	(३५·६)
१६४६	३३·६६	७६·६०	१४५·४१
	(१२·८)	(२६·२)	(५५·४)

निर्यात (करोड़ रुपयों में)

वर्ष	खाद्य पदार्थ	कच्चा माल	निर्मित पदार्थ
१९३८-३९	३९·४३ (२३·३)	७६·२८ (४५·१)	५०·७२ (३०·०)
१९३९-४०	४०·६६ (१९·०)	९१·५३ (४२·९)	७९·०८ (३७·०)
१९४०-४१	४२·३९ (२१·३)	६८·३३ ३४·४	८५·८३ (४३·१)
१९४१-४२	६०·४४ (२३·९)	७३·०४ (२८·९)	११५·०८ (४५·५)
१९४२-४३	४८·६१ (२५·०)	४५·२१ (२३·२)	९८·३३ (५०·५)
१९४३-४४	४८·१४ (२२·९)	५३·७३ (२५·६)	१०५·८९ (५०·४)
१९४५	५३·२५ (२२·३)	७५·७५ (३०·७)	१०५·३१ (४४·०)
१९४६	५८·४३ (१९·२)	१०४·४९ (३४·४)	१३६·७८ (४४·७)

उक्त आंकड़ों से देश की औद्योगिक प्रगति प्रकट होती है, किन्तु फिर भी युद्ध-युग में भारत ने उतनी औद्योगिक उन्नति नहीं की जितनी कि करनी चाहिए, अथवा जितनी अन्य देशों ने की ।

युद्ध युग में ब्रिटिश साम्राज्य के देशों (जैसे आस्ट्रेलिया, कनाडा, मिश्र, ईराक आदि) के साथ भारत का निर्यात व्यापार काफी बढ़ा । १९४०–४५ के पांच वर्षों में कामनवैल्थ के देशों का व्यापारिक भाग ६४ % से भी अधिक हो गया और दूसरे देशों

का हिस्सा ३६ % से भी कम रह गया। आयात व्यापार की दृष्टि से कामनवेल्थ का भाग १९४०-४५ में ५१·५% हो गया, और दूसरे देशों का भाग ४८·५% ही रहा।

(१०) द्वितीय महायुद्ध के उपरान्त का व्यापार

(Trade During the Post War Years)

द्वितीय महायुद्ध युग के बाद की हमारे विदेशी व्यापार की स्थित का पता नीचे दी हुई तालिका* से लगता है:—

(करोड़ रुपये में)

वर्ष	आयात	निर्यात	योग	व्यापार का संतुलन
१९४६	३१६·३८	३०५·७१	६१२·०९	−१०·६७
१९४७	४४२·३२	४२६·७८	८६९·१०	−१५·५४
१९४७-४८ (अप्रैल मार्च)	४४५·८१	४०८·२४	८५४·०५	−३७·५८
१९४८-४९	५४२·९१	४२३·३२	९६६·२३	−११९·५९
१९४९-५०	५६०·५१	४८५·२०	१०४५·७१	− ७५·३१
१९५०-५१	५६५·४६	५२६·८८	११५५·३४	+२१·४१

नोटः—१९४६ और १९४७ के आंकड़े करेन्सी फाइनेन्स की १९४७-४८ की रिपोर्ट के स्टेटमेंट नं० ३ से, १९४७-४८ के लिये १९४८-४९ की रिपोर्ट के स्टेटमेंट नं० २ से और शेष आंकड़े कामर्स ३० जून पृष्ठ १०८८, से लिये गये हैं।

उक्त तालिका से इस युग के भारतीय विदेशी व्यापार के सम्बन्ध में निम्नलिखित महत्वपूर्ण बातों का पता चलता है—

(अ) भारत के विदेशी व्यापार की मात्रा एवं मूल्य दोनों ही

---

* भारतीय अर्थशास्त्र की रूप रेखा—
शंकर सहाय सक्सेना से उद्धत—पृष्ठ २८८

युद्ध के उपरान्त बढ़ते गए। आयात की अपेक्षा निर्यात में अधिक वृद्धि हुई। १६४६ में आयात तथा निर्यात का योग ६६२ करोड़ रुपया था और १६५०-५१ में वह ११५२ करोड़ रुपये के लगभग हो गया।

(आ) युद्ध के उपरान्त व्यापार का संतुलन हमारे पक्ष से विपक्ष में हो गया। इसके अनेक कारण थे। देश के बंटवारे के कारण गेहूँ और कच्चा माल, जैसे कपास और जूट, हमको विदेशों से मंगवाना पड़ा। १६४८ में स्टर्लिंग क्षेत्रों से आयात के विषय में भी भारत की नीति बहुत उदार थी। फल यह हुआ कि निर्यात बहुत कम हो गया और आयात बढ़ने लगा। भारत में चीजों के मूल्य बढ़ते ही जा रहे थे, इसका भी हमारे निर्यात पर बुरा असर पड़ा। डालर क्षेत्र के विषय में भारत की स्थिति और भी बुरी हो गई, क्योंकि १६४७ में १६४६ की अपेक्षा लगभग ७१ करोड़ रुपये का अधिक माल हमने डालर प्रदेशों से मंगाया।

(इ) युद्ध के उपरान्त भारत के आयात निर्यात व्यापार पर अनेक प्रतिबन्ध लगाये गये। आयात सम्बन्धी उदार नीति को भी सरकार ने बदल दिया। मई १६४६ में, ४०० चीजों के स्थान में केवल थोड़ी चीजों को ही व्यापार विषयक खुली छूट (Open General Licence) दी गई। जून १६४६ में डालर प्रदेश से आयात की स्वीकृति देना भी स्थगित कर दिया गया। फिर जुलाई १६४६ में हुये कामनवेल्थ के अर्थ मंत्रियों के सम्मेलन के निर्णय के अनुसार भारत ने डालर प्रदेशों से १६४८ की अपेक्षा आयात में २५% कमी कर दी। भारत व इंगलेंड के बीच समझौते (Financial Agreement) के अनुसार भी आयात पर नियन्त्रण करने का निश्चय किया गया। "निर्यात प्रोत्साहक समिति (Export Promotion Committee)

ने भी देश का निर्यात बढ़ाने के हेतु कुछ नियंत्रण लगाने की सिफारिश की। अतएव निर्यात के माल सम्बन्धी अत्यधिक सट्टे पर नियंत्रण किया गया। आयात में कमी कर दी गई और निर्यात को बढ़ाने का पूर्ण प्रयत्न किया गया। फिर सितम्बर १९४९ में रुपये का अवमूल्यन (Devaluation) हो गया, जिसके फलस्वरूप भी आयात में कमी और निर्यात में वृद्धि हुई। किन्तु इतने पर भी १९४८ तक व्यापार का संतुलन भारत के विपक्ष में रहा, केवल १९५० से ही प्रवृत्ति पक्ष की ओर है।

(ई) आजकल हमारे निर्यात व्यापार में निर्मित पदार्थों का स्थान बराबर बढ़ता जा रहा है और आयात व्यापार में अनाज एवं कच्चे माल का महत्व बढ़ रहा है। देश के बंटवारे ने इस प्रवृत्ति को और भी अधिक प्रोत्साहन दिया है।

(उ) जहाँ तक आयात का प्रश्न है, युद्ध के उपरान्त कामन-वैल्थ राष्ट्रों और इंगलेंड का भी आनुपातिक भाग उसमें कम हो गया है। अन्य देशों में अमेरिका का महत्व विशेष रूप से बढ़ा है। निर्यात के सम्बन्ध में भी कामनवेल्थ का महत्व घट रहा है, किन्तु अन्य देशों का बढ़ रहा है।

(११) भारतीय व्यापार की वर्तमान दशा

(The Present Position of India's Trade)

यह हर्ष का विषय है कि भारतीय व्यापार की वर्तमान स्थित संतोषजनक है। १९४७ के बंटवारे ने भारत के आयात निर्यात में बड़ा परिवर्तन कर दिया है। देश के बंटवारे का परि-णाम यह हुआ कि भारत का सबसे अधिक अन्न, जूट और कपास उत्पादन करने वाला भाग पाकिस्तान को चला गया। अतः अब हमें अन्न, कपास तथा जूट बाहर से मंगाना होता है। दूसरी ओर देश में 'औद्योगीकरण' (Industrialisation) की आवाज जोरों से उठाई जाने लगी है। जब से हमने इस ओर

कदम उठाया है हमारे देश के निर्यात काफी बढ़ रहे हैं और अब निर्यात में निर्मित वस्तुओं एवं आयात में कच्चे माल का महत्व बढ़ गया है। व्यापार का संतुलन भी १९५०-५१ से हमारे पक्ष में हो गया। कामनवैल्थ के देशों के अतिरिक्त अन्य देशों से भी हमारा व्यापार बढ़ रहा है। मध्य पूर्व के देशों में हमारे माल की अच्छी खपत होने लगी है। विदेशी व्यापार के मूल्य में भी काफी वृद्धि हुई और हो रही है। व्यापार की वर्तमान स्थिति के सम्बन्ध में हम विस्तार से अगले अध्याय में लिखेंगे।

तीसरा परिच्छेद

भारत के व्यापार की कुछ विशेषतायें तथा उसके आयात एवं निर्यात—१

(Some Special Features of India's Trade
&
Her Imports and Exports)

सुविधा की दृष्टि से भारतीय व्यापार की विशेषताओं का हम तीन भागों में अध्ययन करेंगे:—

(अ) युद्ध युग (१६३६) के पूर्व की विशेषतायें।
(आ) युद्ध युग (१६३६-४५) की विशेषतायें।
(इ) युद्ध युग के बाद (१६४५ से आज तक) की विशेषतायें।

अ—युद्ध युग के पूर्व की विशेषतायें—

(Special features of the Pre-war years)—

इस युग की पाँच मुख्य विशेषतायें हैं—

(१) निर्यात की अधिकता

(Excess of Exports over Imports or Favourable Balance of Trade):—

द्वितीय महायुद्ध के पहिले भारतीय व्यापार की एक विशेषता यह थी कि हमारे निर्यात आयात की अपेक्षा बहुत अधिक थे, अतएव इस युग में व्यापार का संतुलन सदैव भारत के पक्ष में रहा। निर्यात और आयात का अन्तर सोना तथा अन्य बहुमूल्य धातुओं को मंगा कर पूरा किया जाता था। केवल १६३१ के

बाद हमारे निर्यात कुछ कम होने लगे। इधर प्रतिबर्ष भारत को ४० करोड़ रुपये के लगभग 'होम चार्जेज' (Home Charges) के नाते चुकाने होते थे। अतः १६३१ में तथा इसके बाद व्यापार का संतुलन हमारे विपक्ष में हो गया और सितम्बर १६३१ से भारत से सोने का निर्यात होने लगा। यह स्थिति द्वितीय महायुद्ध के आरम्भ तक रही। तत्पश्चात् व्यापार का संतुलन पुनः देश के पक्ष में हो गया। इस सम्बन्ध में आंकड़े पृष्ठ ३८-३६ पर दिये हुये हैं।

(२) आयात में निर्मित वस्तुओं की अधिकता—

(Preponderance of Manufactured Goods in Imports)

इस युग की दूसरी विशेषता यह है कि भारत के आयात में निर्मित वस्तुओं की अधिकता रही, जैसे कपड़े, चमड़े का सामान काँच का सामान, घड़ियों, खिलौने, मोटर, साइकिल्स, सीने की मशीनें, स्टेशनरी इत्यादि। किन्तु धीरे २ भारत में भी इन चीजों के उत्पादन के कारखाने खुलने लगे और उनका आयात क्रमशः कम होने लगा। इस सम्बन्ध में कुछ आंकड़े इस प्रकार हैं—

भारत के आयात की मुख्य वस्तुयें

(आयात का प्रतिशत)

(१६२०—१६३६)

पदार्थ	१६२०—२१	१६३८—३६	१६३६—४०
१—खाद्य-पेय पदार्थ तथा तम्बाकू	११	१६	२२
२—कच्चा माल	५	२२	२२
३—निर्मित पदार्थ	८४	६२	५६

सौदागरी का सामान तथा बहुमूल्य पदार्थ और सोने की मात्रा (१८९९-१९३५)*

(लाख रुपयों में)

	सौदागरी का सामान (Merchandise)			बहुमूल्य पदार्थ (Treasure)			सौदागरी का सामान तथा बहुमूल्य पदार्थों का योग	सोना (Gold)		
	आयात	निर्यात	अधिकता (Excess of exports over imports)	आयात	निर्यात	कुल निर्यात + कुल आयात —		आयात	निर्यात	कुल निर्यात + कुल आयात —
१८९९-१९०० से १९०३-०४	८४६८	१२४९२	४०२४	२६०१	११६५	—१४३६	२४७२६	१३००	६८२	—६१८
१९०४-०५ से १९०८-०९	११९८५	१६५४४	४५५९	३६१५	९९०	—२६२५	३३१३४	१६८५	७५०	—९३५
१९०९-१० से १९१३-१४	१५१६७	२२४२३	७२५६	४७२०	८३२	—३८८८	४३१४२	३२७९	४६४	—२८१५
१९१४-१५ से १९१८-१९	१५९२५	२२५८३	६६५८	३९०७	७३०	—३१७७	४३१४५	१२१४	४२६	—७८८
१९१९-२० से १९२३-२४	२६७०५	३०६३८	३९३३	५३१६	१३२६	—३९९०	६३९८५	३१२४	१०२५	—२०९९
१९२४-२५ से १९२८-२९	२५१०२	३५३५१	१०२४९	५३६८	४१४	—४९५४	६६२३५	३३६८	१८	—३३५०
१९२९-३० से १९३३-३४	१६१६०	१९८६०	३७४६	१३३८	४२२६	+२८८८	४१५३८	६५४	३०२६	+३०७२
१९३३-३४	११७३०	१५११७	३३८७	१९६	६५५७	+६३६१	३३६००	११०	५८१५	+५७०५
१९३४-३५	१३४५८	१५५५०	२०९२	५१९	६३५१	+५८३२	३५८७८	७२	५३२६	+५२५४

* पृष्ठ ३८ एवं ३९ पर दिये हुये आँकड़े Review of the Trade Of India से उद्धृत किये गये हैं।

सामुद्रिक व्यापार के आँकड़े (१६३५-१६३६)

(लाख रुपयों में)

आयात	१६३५-३६	१६३६-३७	१६३७-३८	१६३८-३६
प्रायवेट				
सौदागरी का सामान	१,४६,७७	१,४१,७०	१,७३ ७६	१,५२,३३
सरकारी स्टोर्स	२,२४	२,३८	३,४४	३,१८
योग				
सौदागरी का सामान	१,५२,०१	१,४४,०८	१,७७,२३	१,५५,५१
बहुमूल्य पदार्थ (योग)	७,८४	१६,४०	४,७१	३,२४
कुल आयात	१,५६,८५	१,६०,४८	१,८१,६४	१,५८,७५
निर्यात				
प्रायवेट सौदागरी का सामान				
भारतीय	१,४६,५५	१,८५,०५	१,८०,६३	१,६२,६३
विदेशी	४,७०	७,२४	८,२८	६,४२
योग प्रायवेट				
सौदागरी का सामान	१,५४,२५	१,६२,२६	१,८६,२१	१,६६,३५
सरकारी स्टोर्स	२६	१२	५६	६२
योग				
सौदागरी का सामान	१,५४,५४	१,६२,४१	१,८६,७७	१,६६,६७
कुल बहुमूल्य पदार्थ	४४,६०	३०,००	१६,७७	१५,१८
कुल निर्यात	१,६६,४४	२,२२,४१	२,०६,५४	१,८५,१५
संतुलन (Balance)	३६,५६	६१,६३	२७,६०	२६,४०

इन आंकड़ों से यह स्पष्ट है कि १६२०—२१ में निर्मित माल का आयात ८४% था। किन्तु जैसा कि अभी हम ऊपर कह

चुके हैं, निर्मित पदार्थों का आयात धीरे धीरे कम होने लगा। १६२१ में प्रशुल्क आयोग (Fiscal Commission) की नियुक्त हुई और संरक्षण द्वारा कुछ उद्योगों को विशेष सुविधा मिलने के कारण निर्मित वस्तुओं का उत्पादन देश में बढ़ने लगा और उनका आयात क्रमशः घटने लगा; यह इन आंकड़ों से स्पष्ट है:-

कुछ निर्मित पदार्थों के आयात सम्बन्धी आँकड़े

(लाख रुपयों में)

पदार्थ	१६२०-२१	१६३२-३३	१६३८-३६
सूती कपड़े	८३,७८	१३ ३७	१४,१५
लोहा व फौलाद	३१,२६	५,३०	६,६६
शक्कर	१८,५०	४,२३	२४
दियासलाई	१,६७	१	....
सीमेन्ट	१,३६	२६	५

(३) निर्यात में कच्चे माल तथा अनाज की अधिकता—
(Preponderance of Raw materials & Agricultural Commodities in Exports)—

इस युग की तीसरी विशेषता यह है कि भारत के निर्यात में कच्चे माल तथा अनाज की ही अधिकता रही। प्रथम महायुद्ध

के पूर्व तक भारत के निर्यात का ७०% भाग कच्चे माल तथा अन्न का ही था। युद्ध युग (I) के समय अवश्य कुछ निर्मित वस्तुओं का भी निर्यात शुरू हुआ, किन्तु बाद में फिर घटने लगा; १६२०—२१ में कच्चा माल तथा अन्न का निर्यात कुल का ६४ % था जबकि निर्मित वस्तुओं का निर्यात केवल ३६ % ही था। १६३६—४० में भी स्थिति प्राय: ऐसी ही रही। अन्य शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि १६३६ तक भारत अपने कच्चे पदार्थों का स्वयं उपभोग न कर सका। निम्नांकित आँकड़ों से यह स्पष्ट है—

भारत के विदेशी व्यापार की वस्तुयें
(निर्यात का प्रतिशत)

पदार्थ	१६२०-२१	१६३२-३३	१६३८-३६	१६३६-४०
खाद्य-पेय पदार्थ तथा तम्बाकू	२८	२६	२३	२०
कच्चा माल	३५	४२	४५	४३
निर्मित पदार्थ	३६	२६	३०	३८

(४) संख्या में निर्यात कम—

(Few Items of Exports)

इस युग में यद्यपि आयात की वस्तुयें तो नाना प्रकार की थीं, किन्तु निर्यात की वस्तुऐं इनो गिनी थीं। यह बात इन आंकड़ों से स्पष्ट है:—

निर्यात की मुख्य वस्तुयें

(लाख रुपयों में)

पदार्थ	१६२०-२१	१६३२-३३	१६३८-३६
जूट का निर्मित माल	५२,४५	२१,४०	२६,२६
कपास	४१,६३	२०,३७	२४,८२
चाय	१२,१५	१७,१५	२३,२६
जूट	१६,३६	६,३७	१३,४०
बीज	६,००	८,००	८,००
सूती कपड़े	७,५१	२,०६	७,५७
चमड़ा और खाल	५,२४	२,७६	६,०४

(५) भारत के व्यापार में यू० के० का विशेष स्थानः—

(U. K. 's Predominent Position both in Imports and Exports)

इस युग में भारत के विदेशी व्यापार में प्रायः यू० के० की प्रधानता रही है, अर्थात् हमारे अधिकांश आयात वहीं से आते तथा निर्यात भी प्रायः वहीं को जाते थे। १६१४ के पहिले चार वर्षों में कुल आयात का ६३ भाग यू० के० से ही आया। इसका मुख्य कारण यह था कि वही ऐसा देश

था, जहाँ सर्व प्रथम औद्योगिक क्रान्ति शुरू हुई और जिसने सबसे अधिक अपने को औद्योगिक बनाया। सदूरे, उसका स्वेज पर भी विशेष अधिकार एवं प्रभाव था। किन्तु, जैसे जैसे अन्य देश भी अधिक २ औद्योगिक होने लगे, यू० के० की प्रधानता घटने लगी। निम्नांकित आँकड़े इस बात के साक्षी हैं:—

भारत के व्यापार में यू० के० का भाग

(लाख रुपयों में)

	१६०६–१४ का औसत		१६१४–१६ का औसत		१६३८–३६	
	मूल्य	प्रतिशत	मूल्य	प्रतिशत	मूल्य	प्रतिशत
निर्यात	५६·३०	२५·१	६६·६२	३१·१	५८·२५	३४·३
आयात	६१·५८	६२·८	८३·५६	५६·५	६·४६	३०·२

(आ) युद्ध युग (१६३६-४५) की विशेषतायें

(Peculiar Features Of The War Period)

(१) निर्यात व्यापार में वृद्धि

(The Increase in Imports)

१६३६ में युद्ध के छिड़ जाने के कारण विश्व से व्यापार में काफी वृद्धि हुई। जिन देशों में युद्ध की विशेष शंका थी, उन्होंने कच्चा तथा आवश्यक निर्मित माल मंगाना शुरू कर दिया। फलतः भारत का निर्यात व्यापार बढ़ने लगा। निर्यात के मुख्य पदार्थ थे, चाय, कपास और जूट का माल। १६४२-४३, १६४३-४४ तथा १६४४-४५ में जूट के माल का निर्यात क्रमशः ३६, ४६ एवं ६० करोड़ रुपया था। सूती कपड़ों का निर्यात भी १६४२-४३ में ४६ करोड़

और १९४४-४५ में ३८ करोड़ रुपया हो गया। १९४४-४५ में चाय का निर्यात ३८ करोड़ से बढ़ गया। इस युग में मूंगफली के तेल का भी व्यापार खूब बढ़ा। निम्नांकित आंकड़ों से इस युग के भारतीय व्यापार की एक झलक मिलती है:—

बृटिश भारत का समुद्री व्यापार

(करोड़ रुपयों में)

	१९४०-१९४१	१९४१-१९४२	१९४२-१९४३	१९४३-१९४४	१९४४-१९४५
आयात:—					
खाद्य पदार्थ	२४	२८	८	७	१९
कच्चा माल	४२	५०	५२	६२	११७
निर्मित माल	७०	९४	४८	४५	६५
विविध वस्तुयें	२	२	१	२	२
योग	१३८	१७४	११०	११८	२०३
निर्यात:—					
खाद्य पदार्थ (चाय सहित)	४२	६०	४९	४८	५०
कच्चा माल	६८	७३	४५	५४	५८
निर्मित माल	८६	११५	८८	१०६	११६
विविध माल	२	४	३	२	३
योग	१९८	२५२	१९५	२१०	२२७

(२) व्यापार में ब्रिटिश साम्राज्य के देशों की प्रधानता
(Expansion Of Trade With Empire Countries)

इस युग में भारत का व्यापार प्रधानतः संयुक्त राज्य अमेरिका आस्ट्रेलिया, कनाडा, मिश्र देश, ईराक और मध्य पूर्व के अन्य देशों से बढ़ा। इन सब में भी संयुक्त राज्य अमेरिका से व्यापारिक सम्बन्ध सबसे अधिक हो गया। १६४४-४५ में संयुक्त राज्य अमेरिका से लगभग ६५ करोड़ रुपये का व्यापार हुआ जबकि उसी वर्ष यू० के० के साथ व्यापार लगभग १०२ करोड़ का था।

(३) व्यापार का संतुलन पक्ष में
(Favourable Balance Of Trade)

इस युग में व्यापार का संतुलन भारत के पक्ष में रहा, जैसा कि इन आंकड़ों से स्पष्ट है:—

व्यापार का संतुलन
(करोड़ रुपयों में)

१६३८-३६	+ १७·५
१६३६-४०	+४८
१६४०-४१	+४२
१६४१-४२	+८०
१६४२-४३	+ ८४
१६४३-४४	+ ६२
१६४४-४५	+ ४२

(ई) युद्ध युग के बाद (१६४५-आजतक) की विशेषतायें
(Special Features of the Post-war Years)

(१) बंटवारा:
(Division)

१६४७ में भारतवर्ष का विभाजन हो गया; किन्तु फिर

भी भारत के विदेशी व्यापार की मात्रा पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। हमारे आयात तथा निर्यात दोनों ही में वृद्धि हुई। इस वृद्धि के प्रधान कारण हैं:—लाइसेंस के सम्बन्ध में ढीली नीति, विश्व के व्यापार में सुधार, तथा भारत में अन्न, कपास, जूट, कृषि यंत्र, जल विद्युति मशीनरी, उद्योग संयंत्र आदि की आवश्यकता। फलतः १९४८ तथा १९४९ में भारत का व्यापार क्रमशः : ९०१ करोड़ व १०६० करोड़ रुपया हुआ।

(२) व्यापार का संतुलनः

(Balance Of Trade)

जैसा कि इस तालिका से प्रगट है, भारत के व्यापार का संतुलन, विशेषतः डालर-देशों के साथ, देश के विपक्ष में हो गयाः—

	योग		स्टर्लिंग देश		नान-स्टर्लिंग देश	
	१९४८	१९४९	१९४८	१९४९	१९४८	१९४९
निर्यात	४२८	४२५	२२२	२३८	२०६	१८७
आयात	४७०	६२२	२३०	२८९	२४०	३३२.५
संतुलन	—४२	—१९७	—८	—५१	—३४	—१४५.५

अतः आज समस्या नान स्टर्लिंग देशों को निर्यात बढ़ाने की है। निर्यात बढ़ाने के लिये विश्व के विभिन्न देशों के लिये कोटा निश्चित करना चाहिये और यह ध्यान रखना चाहिये कि डालर देशों को हमारे निर्यात सबसे अधिक हों। १९५१ में एक्सपोर्ट एडवाइजरी काउन्सिल (Export Advisory Council) ने

इसके सम्बन्ध में यह सुझाव दिया कि डालर देशों के यात्रियों को भारत में यात्रा (Tourist Traffic) के हेतु प्रोत्साहन दिया जाय, उन देशों को तेल के स्थान पर बीज भेजे जांय, जिनकी उनको विशेष आवश्यकता है। 'टी मार्केटिंग बोर्ड (Tea Marketing Expansion Board) के द्वारा उन देशों में चाय का प्रचार किया जावे जिससे कि वहाँ हमारी चाय का निर्यात बढ़े। कनाडा तथा अमेरिका को भारत की कलापूर्ण चीजों के निर्यात में कोई रुकावट न हो, और भारत के कुटीर उद्योगों की वस्तुओं को प्रोत्साहित किया जाय तथा उनका निर्यात किया जावे।

(३) रुपये का अवमूल्यन:—
(Devaluation of the Rupee).

जब व्यापार का संतुलन फिर भी विपक्ष में रहा, तो सितम्बर १६४६ में रुपये का अवमूल्यन (Devaluation) कर दिया गया और डालर देशों में आने वाले माल पर कड़े नियंत्रण लगा दिये गये। फलस्वरूप १६४६ में नवम्बर से व्यापार का संतुलन सुधरने लगा और १६५० तथा १६५१ में तो हमारे निर्यात काफी बढ़ गये और अब व्यापार का संतुलन भी देश के पक्ष में है।

(४) निर्यात में निर्मित माल की ही अधिकता:—
(Preponderance of manufactures in Imports)

इस युद्ध में एक विशेष बात यह थी कि हम निर्मित वस्तुयें ही विदेशों को अधिक भेजते रहे और हमने मुख्यतः कपास तथा जूट का आयात किया। अच्छी कपास मिश्र तथा पूर्वी अफ्रीका से मंगाई, और जूट पाकिस्तान से। आयात के आँकड़े इस प्रकार हैं:—

भारत के आयात
(करोड़ रुपयों में)

वर्ष	खाद्य पदार्थ	कच्चा माल	निर्मित माल	विविध वस्तुयें
६४५	२२	१२८	८८	३
१६४६	३३	७७	१४६	७
१६४८	८३	११०	२७०	५
१६४६	१२४	१५६	२३४	५

(५) जूट का विशेष आयातः—
(Jute imported in large quantity)

१६४७ के दुखद बंटवारे के कारण जूट के उत्पादन का ७३% भाग पाकिस्तान को चला गया, अतः जूट के लिये हमारे कारखाने पाकिस्तान पर निर्भर हो गये और वहाँ से ही हमको जूट का विशेष आयात करना पड़ा।

(६) अन्न का विशेष आयातः—
(Excess of Food Imports)

बंटवारे के ही कारण हमारे गेहूँ उत्पादन के क्षेत्र भी पाकिस्तान को चले गये और १६४२ में हमको लगभग ६ मिलियन टन अनाज बाहर (मुख्यतः अर्जेन्टायना, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, इटली, टर्की, रूस, आस्ट्रेलिया, श्याम, बर्मा आदि) से मंगाना पड़ा। १६४६ में १५० करोड़ रुपये का अनाज (लगभग चार मिलियन टन) बाहर से मंगाना पड़ा। इसी प्रकार १६५० और १६५१ में भी बाहर से अनाज आया।

(७) औद्योगीकरण:—
(Industrialisation)

इस युग में भारत में औद्योगीकरण की विशेष प्रगति हुई और फलस्वरूप निर्मित वस्तुओं का निर्यात बढ़ा, जैसा कि इन आंकड़ों से स्पष्ट है:—

भारत का निर्यात (करोड़ रुपयों में)

वर्ष	खाद्य पदार्थ	कच्चा माल	निर्मित माल	विविध वस्तुयें
१९४५	५३	५७	१०४	५
१९४६	५३	६१	१३०	५
१९४८	८०	१०८	२३०	२
१९४९	११४	६३	२१६	२

(८) व्यापार की दिशा में परिवर्तन:—
(Change in the Direction of Trade)

से हमारा व्यापार बहुत बढ़ गया। उसके अतिरिक्त आस्ट्रेलिया, पाकिस्तान, कनाडा, बर्मा, तथा मिश्र देश से भी हमारा व्यापार बढ़ा। इस तालिका से यह स्पष्ट है कि नान-इम्पायर (Non-empire) देशों के साथ हमारा व्यापार उन्नति पर है:—

व्यापार (करोड़ रुपयों में)

कामनवैल्थ	निर्यात	आयात	योग
११४५	१३०	९०	२२०
१९४६	१३४	१४७	२८१
१९४८	२११	२०९	४२०
१९४९	२३१	२८५	५१६
अन्य देश			
१९४५	८९	१५१	२४०
१९४६	१४९	११६	२६०
१९४८	२०९	२४६	४५५
१९४९	१९४	३३७	५३१

चौथा परिच्छेद

भारत के व्यापार की दिशा एवं उसके प्रमुख आयात निर्यात—१

(Direction of India's Trade & Her Principal Imports And Exports)

'व्यापार की दिशा' से आशय उन देशों से है जिनसे कि भारत का व्यापारिक सम्बन्ध है। इस दृष्टिकोण से विश्व के देशों को दो खडों में बाँट सकते हैं:—(१) ब्रिटिश साम्राज्य के देश और (२) विश्व के अन्य देश। प्रारम्भ से ही भारत से व्यापार करने वाले देशों में प्रथम खंड के देशों की ही प्रधानता रही है। १६०६–१६१४ में भारत से विदेशों को जो निर्यात हुआ, उसका ४१% भाग ब्रिटिश साम्राज्य के देशों को ही गया, और १६४३-४४ में तो यह प्रतिशत ६५·४% हो गया। किन्तु यह प्रगति द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति तक ही रही। उसके बाद के वर्षों में विश्व के अन्य देशों से भी हमारे व्यापारिक सम्बन्ध बढ़ने लगे। १६०६-१४ में ब्रिटिश साम्राज्य के देशों को हमारे निर्यात का औसत लगभग ४१% और विश्व के अन्य देशों को ५६% था; किन्तु १६४६ में प्रतिशत के ये आँकड़े ५४% और ४६% क्रमशः हो गये। उसी प्रकार १६०६-१४ में ब्रिटिश साम्राज्य के देशों से आयात का औसत लगभग ७०% और विश्व के अन्य देशों से ३०% था, किन्तु १६४६ में प्रतिशत के ये आँकड़े भी क्रमशः ४६% और ५४% हो गये। ब्रिटिश साम्राज्य के देशों के अतिरिक्त हमारे व्यापारिक सम्बन्ध मुख्यतः संयुक्त राज्य अमेरिका, जैकोस्लोवैकिया, वेल्जियम और जापान से

(केपिटल गुड्स के लिये) तथा अर्जेन्टायना, बर्मा, रूस, कनाडा आस्ट्रेलिया और पाकिस्तान से (अन्न के लिये) बढ़ रहे हैं। कामनवैल्थ के देशों तथा अन्य देशों से भारत के व्यापार सम्बन्ध के कुछ ताजे आँकड़े इस प्रकार हैं:—

भारत के विदेशी व्यापार के आँकड़े

(लाख रुपयों में)

	फरवरी		११ माह अप्रैल से फरवरी तक	
	१९५२	१९५१	१९५१-५२	१९५०-५१
आयात :—				
सम्पूर्ण कामनवैल्थ के देश	२२,७७	१९,१९	२,६३,७५	२,२२,३३
सम्पूर्ण विश्व के अन्य देश	५५,२०	३२,११	५,०८,४०	२.८७,०४
निर्यात:—				
सम्पूर्ण कामनवैल्थ के देश	२२,१७	२९,५५	३,३९,०७	२,५७,२२
सम्पूर्ण विश्व के अन्य देश	२१,६८	३०,९८	३,०२,००	२,३५,०५

अब हम भारत के व्यापार की दिशा के सम्बन्ध में कुछ विस्तार से वर्णन करेंगे :—

भारत और यू० के० के मध्य व्यापार
(Trade between India & U. K.)

यह तो हम कई बार कह चुके हैं कि भारत के विदेशी व्यापार में यू० के० की सदैव से प्रधानता रही है। इस सम्बन्ध में कुछ आवश्यक आँकड़े ये हैं :—

भारत के व्यापार में यू० के० का भाग

वर्ष	आयात %	निर्यात%
१६०६-१०-१६१३-१४ (औसत)	६२·८	२५·१
१६३८-३६	३०·५	३४·३
१६४५-४६	२५·३	२८·२
१६४८	३१·७	२४·५
१६४६	२७·८	२६·४

नीचे दी हुई तालिका भारत के यू० कं० को आयात और निर्यात का ज्ञान कराती है :—

यू० के० से भारत का व्यापार

मुख्य निर्यात (मिलियन पौंड में)	१९४८	१९४९	मुख्य आयात	१९४८	१९४९
चाय	३५	४१·७	मशीनरी	३३·७	३८·९
जट का माल	१५·६	१०·७	जहाज इन्जन आदि	१३·१	१५·८
चमड़ा	७·२	१०·३	कपड़े तथा सूत का तागा	७·०	११·०
बीज सुपाड़ी तेल गोंद	९·६	५·२	दवाइयाँ आदि	९·०	१०·३
तम्बाकू	२·९	५·६	बिजली का सामान	६·६	९·३
कपास तथा रद्दी रुई	३·१	१·५	लोहे और फौलाद का सामान	४·२	५·१
बेंत तथा चटाई	१·८	२·१	नॉन फेरस मेंटल तथा मैन्यूफैक्चर्स	३·७	३·२
ऊन तथा रद्दी ऊन	१·८	१·९		३·६	३·२
ऊनी कपड़े तथा ऊनका तागा	१·६	१·६	ऊन तथा ऊनी कपड़े	२·७	३·३
चमड़ा, खाल, आदि	१·१	१·८	चाकू छुरी आदि		
नॉन-मैटलिक चीजें	१·४	१·१	रेशम तथा कृत्रिम रेशम	१·०	२·३
मेंगनीज़	०·९	१·१	मिट्टी तथा काँच का सामान	१·४	२·२
तेल चर्बी	१·०	०·५	कागज, आदि	१·८	१·७
योग	९६·०	९८·०	योग	९६·६	११७·१

नोट—वर्तमान आँकड़ों में जो परिवर्तन हो रहा है, उसका विश्लेषण नीचे दे रहे हैं।

उक्त आँकड़ों से यह स्पष्ट है कि यू० के० से भारत मुख्यत: मशीनरी, मशीन के पुर्जे, औज़ार, गाड़ियाँ (Vehicles),

दवाइयाँ, आदि मँगाता है और बदले में जूट का सामान, चाय, चमड़ा, खाल, गोंद, तेल, मैंगनीज आदि का निर्यात करता है। विशेष ध्यान देने की एक बात यह है कि यू० के० से अब हमारे आयात दिन पर दिन कम होते जा रहे हैं व अन्य देशों से हमारा व्यापार बढ़ता जा रहा है। १६१४ के पूर्व यू० के० से हम लगभग ६३% का आयात करते थे, किन्तु द्वितीय महायुद्ध के समय वहाँ से हमारा आयात केवल २५% ही रह गया। युद्ध के बाद के वर्षों में अवश्य आयात की मात्रा बढ़ने लगी (लगभग ३०% हो गई), क्योंकि इङ्गलैंड में जमा हमारे पौन्ड पावने (Sterling Balances) के आधार पर सरलता से माल मिल सकता था। रुपये के अवमूल्यन (Devaluation) के कारण हमारे आयात यू० के० से और भी बढ़ने लगे, क्योंकि इसमें भारत का हित था। निर्यात के सम्बन्ध में यह कहना आवश्यक है कि अब कपास का निर्यात बिलकुल शून्य होता जा रहा है। १६४७ के पूर्व हम काफी मात्रा में कपास का निर्यात यू० के० को ही करते थे। परन्तु बँटवारे के दानव ने हमारे इस निर्यात पर वज्रपात सा कर दिया है और अब तो अपने लिये ही हमें कपास का आयात अन्य देशों से करना पड़ रहा है।

सारांश में हम यह कह सकते हैं कि आज भी भारत के व्यापार में यू० के० का बड़ा महत्व है, क्योंकि प्रथम तो देश को पूर्ण औद्योगिक (Industrialise) करने के लिये हमें मशीनरी तथा उत्पादक वस्तुओं (Capital Goods) की आवश्यकता पड़ेगी, जिसके लिये संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद यू० के० ही एक सुन्दर केन्द्र है। दूसरे, अपने निर्यात को बढ़ाने के लिये तथा अपने देश की बनी चीजें (जैसे जूट का माल, कलापूर्ण चीजें आदि) बेचने के लिये भी हमें यू० के० के बाजारों की शरण लेनी पड़ेगी।

भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका के मध्य व्यापार

(Trade between India & U. S. A.) :—

आज कल भारत का व्यापार संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। द्वितीय महायुद्ध के पूर्व भारत के व्यापार में उसका भाग इतना महत्वपूर्ण न था। १६३८-३६ से पूर्व हमारी आवश्यकताओं का ६% से कुछ कम भाग ही यू० एस० ए० से आया। द्वितीय महायुद्ध शुरू होने पर शत्रु राष्ट्र तथा अन्य देश जो युद्ध में संलग्न थे, उनसे हमारा व्यापार बन्द सा ही हो गया और अन्य देशों से बढ़ने लगा। ऐसे देशों में (जिनसे हमारा व्यापार बढ़ा) संयुक्त राज्य अमेरिका का नाम प्रमुख है। १६४४-४५ तक भारत की आवश्यकताओं का २५% भाग यू० एस० ए० से आने लगा। द्वितीय महायुद्ध के बाद भी संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ हमारा व्यापार बढ़ता ही गया। १६४८ में उसने १०८ करोड़ रुपये की वस्तुयें भारत को निर्यात कीं और लगभग ७८ करोड़ रुपये का सामान भारत से खरीदा। १६४६ में उसने १०० करोड़ रुपये का माल निर्यात किया और ६६ करोड़ रुपये का सामान भारत से खरीदा। स्पष्ट है कि यू० एस० ए० को हमारे निर्यात की मात्रा खूब बढ़ रही है, यद्यपि आयात कुछ कम हो रहे हैं। वह इसलिये कि आयात घटाकर और निर्यात बढ़ा के ही तो भारत डालर की कमी को पूरा कर सकता है।

भारत का जिन देशों से व्यापारिक सम्बन्ध है, उनमें यदि यू० के० का नम्बर प्रथम है, तो अब यू० एस० ए० का नम्बर दूसरा है। भारत की सर्व प्रमुख वस्तु जिसकी संयुक्त राज्य अमेरिका में सबसे अधिक खपत होती है, वह जूट और जूट की बनी हुई वस्तुयें हैं। उनके अतिरिक्त हमारे दूसरे मुख्य निर्यात—बकरी और मैमना की खालें, लाख, केशू नट्स (Cashew

Nuts) और सन्दल की लकड़ी हैं। नारियल की जटा की चटाइयाँ तथा नारियल की जटायें भी यू० एस० ए० केवल भारत से ही मँगाता है। रेन्डी का बीज (Castor Seed), चाय तथा मसाला भी वहाँ के लिये भारत से निर्यात किया जाता है। यह बात दुहराना अनावश्यक न होगा कि भारत और अमेरिका के व्यापार में जूट तथा जूट की वस्तुओं का नाम सबसे अधिक उल्लेखनीय है। हमारे नियात में जूट तथा जूट की बनी चीजों का ५०% भाग होता है। जितनी मात्रा बकरी और मेमनों की खालों की विदेशों को भारत से निर्यात होती है उसका ३५% भाग संयुक्त राज्य अमेरिका को ही जाता है। हमारी चाय के निर्यात का भी काफी भाग यू० एस० ए० को जाता है। १६४५ में उसने लगभग १६ मिलियन डालर्स की चाय भारत से खरीदी, जो कि भारतीय चाय के कुल निर्यात के ५०% भाग के बराबर है। केशूनट्स भी लगभग १६ मिलियन डालर्स के खरीदे। इन आँकड़ों से स्पष्ट हो जाता है कि चाय, जूट, जूट की बनी चीजें, खालें तथा केशूनट्स के लिये संयुक्त राज्य अमेरिका का बाजार भारत के लिये बड़ा महत्व रखता है।

अब हम यू० एस० ए० से आने वाली चीजों पर विचार करें। वहाँ से आयात की मुख्य वस्तुयें ये हैं—मशीनों के पुर्जे, खानों से सम्बन्धित मशीनरी (Mining Machinery), रिफायनिंग मशीनरी (Refining Machinery), ऑटोमोबाइल्स (Automobiles), ट्रक्स (Truks), बसें (Buses) इत्यादि। इनके अतिरिक्त अच्छी लम्बे रेशे वाली अमेरिकन कपास भी भारत यू० एस० ए० से ही खरीदता है। दवाइयाँ आदि भी बड़ी मात्रा में वहीं से आती हैं और इस आयात की मात्रा दिन पर दिन बढ़ती ही जा रही है। १६३८ में १½ मिलियन डालर्स की दवाइयाँ आईं किन्तु १६४५ में यह मात्रा ५½ मिलियन डालर्स हो गई।

स्थिति और भी बुरी होने लगी। इस परिवर्तन के कई कारण थे। मिलिट्री के प्रयोग की चीजों का निर्यात युद्ध बन्द होने के कारण समाप्त हो गया और फिर देश में डालर संकट आ गया। इधर बँटवारे के फलस्वरूप गेहूँ की कमी को दूर करने के लिये विवश होकर हमें दूसरे देशों के अतिरिक्त इस देश (कनाडा) का भी सहारा लेना पड़ रहा है। मशीनरी की हमको आवश्यकता है ही। किन्तु इसके विपरीत हम कनाडा की आवश्यकतायें पूरी करने में असमर्थ हैं, क्यों कि प्रधानतः दोनों ही देश कृषि प्रधान हैं और अपना अपना औद्योगिक विकास करने में लगे हुये हैं। सुन्दर बात केवल यही है कि इन दोनों में प्रतिद्वन्दता की भावना नहीं, अतः भविष्य में व्यापार बढ़ने की बड़ी आशा है।

कनाडा को हमारे निर्यात की प्रमुख वस्तुयें ये हैं:—जूट की बनी चीजें, चाय, बकरी और भेड़ की खालें, सुपाड़ी, वेजोटेबिल, तेल, मसाले, दाल, दरी आदि। इनके बदले में भारत वहाँ से निम्न चीजें आयात करता है—गेहूँ, फैक्टरी का सामान—जैसे क्रीम-सेपरेटर्स, चनस, लकड़ी तथा धातु पर काम करने वाली मशीनरी, कृषि सम्बन्धी मशीनरी जैसे हल, फावड़ा, जेनरेटरर्स, ट्रान्सफारमस आदि।

अपने निर्यात बढ़ाने के लिये भारत कनाडा को सूती कपड़े भेज सकता है, क्योंकि सूती कपड़ों के लिये कनाडा में भारत के लिये बहुत अच्छा बाजार है।

भारत और आस्ट्रेलिया के बीच व्यापार

(Trade between India & Australia)

भारत और आस्ट्रेलिया के मध्य व्यापार सम्बन्धी निम्न आँकड़े प्रगट करते हैं कि आस्ट्रेलिया से हमारे व्यापारिक सम्बन्ध सन्तोषजनक हैं:—

(लाख रुपयों में)

	१९०९-१४ का औसत	१९३८-३९	१९४६-४७	१९४८	१९४९
निर्यात	३१४	२९८	१,३७५	२,३१८	२,४४८
आयात	१०१	२४१	१,०४०	१,८५१	२,२२०

व्यापार का संतुलन भारत के पक्ष में है। इसमें सन्देह नहीं कि भविष्य में भारत का आस्ट्रेलिया के साथ व्यापारिक सम्बन्ध बहुत बढ़ेगा। १९३९ के पहिले तो अधिकांश लोग आस्ट्रेलिया को किसानों तथा खान खोदने वालों का देश समझते थे, किन्तु पिछले युद्ध युग में आस्ट्रेलिया ने आशातीत उन्नति कर ली है और अब वह केवल कृषि प्रधान ही नहीं वरन एक बड़ा औद्योगिक देश भी बन गया है। अब भारत के औद्योगीकरण में आस्ट्रेलिया काफी सीमा तक सहायक हो सकता है। तान्त्रिक विशेषज्ञों (Technical Experts) की वहाँ कमी नहीं किन्तु इनकी भारत को आवश्यकता है। दूसरे, कृषि के लिये तथा कागज, प्लास्टिक, प्लाईवुड और चमड़े का सामान बनाने के लिये नाना प्रकार की मशीनरी भी हमको आस्ट्रेलिया से मिल सकती है। सड़कों के निर्माण तथा पेन्ट और वारनिश बनाने के लिये आवश्यक यंत्र भी वहाँ से प्राप्त किये जा सकते हैं। हमारे अन्न संकट को भी आस्ट्रेलिया काफी मात्रा में दूर कर सकता है। अतः यह स्पष्ट है कि उक्त वस्तुओं के लिये भारत को अपना व्यापार आस्ट्रेलिया से बढ़ाना होगा। बदले में भारत आस्ट्रेलिया को निम्न चीजें निर्यात कर सकता है:—तिलहन

(Oil seeds), चपड़ा या लाह (Shellac), हर्रा (Myrobalan), अभ्रक (Mica), मसाले, बकरी की खाल, और जूट की बनी वस्तुयें। इन चीजों के अतिरिक्त भारत कुछ कपड़ा भी आस्ट्रेलिया भेज सकता है।

न्यूजीलैंड (Newzealand) से हम अनेक दुग्ध पदार्थ (Milk Products) तथा जमा हुआ ठंडा गोश्त मंगा सकते हैं और बदले में दरी, जूट का सामान तथा अन्य औद्योगिक पदार्थ भेज सकते हैं।

भारत और मध्यपूर्व के देशों में व्यापार

(Trade between India and the Middle East)

मध्य पूर्व के देशों से भारत का व्यापार प्राचीन युग से चला आ रहा है। ये सभी देश प्रायः कृषि प्रधान ही हैं, और यहाँ के लोगों का मुख्य व्यवसाय खेती करना अथवा भेड़ बकरी या घोड़े चराना है। द्वितीय महायुद्ध के समय से इन देशों का व्यापार भारत से बहुत बढ़ गया है; और जब से इन देशों में तेल के नये कुओं का पता चला है, उनकी प्रमुखता और भी बढ़ गई है। आइये अब इन देशों से व्यापार का अलग अलग वर्णन करें।

निर्यात के सम्बन्ध में केवल इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि भारत इन देशों को सूती कपड़े, जूट का सामान, फौलाद चाय और मसाले भेजता है। जूट के माल के मुख्य खरीददार मिश्र देश, टर्की और सूडान हैं। भारत के कपड़ों की भी इन देशों में अच्छी खपत होती है। १९४२-४३ में दस करोड़ के लगभग सूती कपड़ा भारत ने इन देशों को निर्यात किया। इन देशों में चाय की लगभग तीन करोड़ रुपये की खपत हो जाती है। भारत की तम्बाकू के लिये भी इन देशों में अच्छा बाजार है, किन्तु अपने निर्यात को बढ़ाने के लिये भारत को चाहिये कि

अच्छी श्रेणी की तम्बाकू तैयार करे और भली प्रकार उसका पैकिंग हो।

इन देशों से भारत के प्रमुख आयात तेल और कपास हैं। युद्ध के पूर्व तो अपनी आवश्यकता का ४८% तेल का भाग वह वर्मा से ही आयात कर लेता था। किन्तु अब वह ईरान और बहरीन (Bahrein) पर ही निर्भर है। १९४२-४३ में २८ करोड़ रुपये का तेल इन दो भागों से भारत ने आयात किया। १९४४-४५ में ईरान से ही भारत ने ४६ करोड़ रुपये का तेल खरीदा, किन्तु बदले में केवल ३ करोड़ रुपयों की ही वस्तुयें निर्यात कीं। १९४८ में १६ करोड़ और १९४९ में ३१ करोड़ रुपये के लगभग का तेल आयात हुआ। इसके विपरीत इन दो वर्षों में हमारा निर्यात केवल २४ करोड़ और ५ करोड़ रुपयों का ही हुआ। अतएव इन देशों से हमारे व्यापार का संतुलन विपक्ष में है। मिश्र (जहां से कि भारत कपास और चावल प्राप्त करता है) से तो हमारे व्यापार का संतुलन बहुत ही विपक्ष (unfavourable) है।

१ भारत और सुदूर पूर्व के देशों के बीच व्यापार

(Trade between India and the Countries of the Far East)

बहुत पहले से सुदूरपूर्व के देशों से भारत के व्यापारिक सम्बन्ध चले आये हैं, किन्तु जापान, लंका और बर्मा को छोड़ कर अन्य देशों से कोई विशेष व्यापार नहीं होता। इन देशों में केवल लंका के साथ ही व्यापार का संतुलन हमारे पक्ष में है।

बर्मा से संतुलन के आंकड़े इस प्रकार हैं:—

वर्मा के साथ व्यापार का संतुलन

(करोड़ रुपयों में)

१६३७-३८	– १५
१६३८-३६	- १४
१६३६-४०	- १८
१६४०-४१	– ११
१६४१-४२	१६.५
(युद्ध युग में वर्मा से व्यापार निषेध था)	
१६४६-४७	+ ४

१६४७ से संतुलन फिर विपक्ष में ही रहा और आज भी है। बर्मा से हमारे प्रमुख आयात तेल, चावल और टीक की लकड़ी हैं; इन चीजों के बदले में भारत वर्मा को कपड़ा, शक्कर, कागज, जूट के बने थैले आदि वस्तुयें निर्यात करता है।

७ भारत और इन्डोनेशिया के बीच व्यापार

(Trade between India & Indonesia)

महायुद्ध के पहिले इन्डोनेशिया के देशों से भारत गन्ना, तेल, मोम, टीक, कुनैन, मसाले और टीन मंगाता था, और बदले में जूट की वस्तुयें, सूती कपड़े, वेजीटेबिल तेल, बीज, कोयला और हर्रा भेजता था। युद्ध में इन देशों से व्यापार बन्द रहा। अब युद्ध के बाद व्यापार पुनः प्रारम्भ हो गया है परन्तु शक्कर का आयात अभी बन्द ही है। यह सन्तोष का विषय है कि व्यापार का संतुलन हमारे पक्ष में है।

एशिया तथा सुदूर पूर्व की संयुक्त राष्ट्र आर्थिक समिति (E. C. A. F. E. – United Nations Economic Committee for Asia and the Far East.) का विश्वास

है कि इन्डोनेशिया से भारत का व्यापार काफी बढ़ सकता है। इन्डोनेशिया के देशों में विश्व के उत्पादन का ६२% चावल, ६६% चाय और ३८% गन्ना होता है, अतः वहां से गन्ना और चावल का आयात करके हम अपने अन्न तथा शक्कर के संकट को दूर कर सकते हैं। जापान की स्थिति आज अच्छी नहीं। अतः भारत ही पूर्व का नेता (Leader of the East) है। चावल के अतिरिक्त मक्का, खजूर का तेल, मसाले, खोपड़ा, टीक आदि भी वहाँ से मँगा सकते हैं और बदले में भारत उपभोग की अनेक वस्तुयें अबरक (Mica), मैंगनीज, केस्टर के बीज, जूट के सामान, कपड़े आदि का निर्यात कर सकता है। इस दृष्टि से हमारे व्यापार का भविष्य बड़ा उज्जवल है।

भारत और पाकिस्तान के व्यापार का वर्णन एक पृथक अध्याय में दिया गया है क्योंकि किसी समय देश का अंग और अब एक निकटतम पड़ोसी होने के नाते उसका महत्व हमारे लिये विशेष है।

पाँचवां परिच्छेद

भारत के व्यापार की दिशा एवं उसके प्रमुख आयात निर्यात—२

(Direction of India's Trade & Her Principal Imports And Exports)

भारत के प्रमुख आयात एवं निर्यातः—

(Main Imports & Exports of India)

भारत के प्रमुख आयात और निर्यात समझने के लिये निम्न-तालिका* से बड़ी सहायता मिलेगी:—

तालिका—अ

	आयात	देश जहां से माल आता है
१.	मशीनरी (इलेक्ट्रिक व अन्य मशीनरी)	यू० के०, संयुक्त राज्य अमेरिका, बेल्जियम, जर्मनी, जापान, फ्रान्स और जैकोस्लोवेकिया
२.	मोटर कार आदि	यू० के०, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, जर्मनी, इटली और फ्रान्स
३.	जलाने का तेल (केरोसीन)	ईरान, चीन, बोर्नियो, सुमात्रा, संयुक्त राज्य अमेरिका, बर्मा आदि
४.	कागज	यू० के०, जर्मनी, संयुक्त राज्य अमेरिका, स्वीडन और नार्वे

* कॉमर्स—दिनाङ्क ३१ मई, १६५२

५.	नकली रेशम का यार्न तथा रेशमी कपड़ा	जापान, चीन, इटली और यू० के०
६.	रासायनिक पदार्थ तथा दवाइयां	यू० के०, संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी और जापान
७.	कच्चा जूट	पाकिस्तान
८.	कच्चा कपास	मिश्र देश, संयुक्त राज्य अमेरिका, तथा पाकिस्तान
९.	अन्न (गेहूँ, चावल आदि)	अर्जेनटायना, कनाडा, आस्ट्रेलिया, संयुक्त राज्य अमेरिका, तथा वर्मा

तालिका—ब

	निर्यात	स्थान जहां माल जाता है
१.	जूट का माल	संयुक्त राज्य अमेरिका, यू० के०, अर्जेनटायना, बेल्जियम आस्ट्रेलिया, कनाडा, जापान, जर्मनी, आदि
२.	चाय	यू० के०, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, ईरान' अरब, लंका, आदि
३.	सूती कपड़े	आस्ट्रेलिया, लंका, सूडान, मलाया स्टेट्स, वर्मा, अरब, केनिया, जन्जीबार, स्टेट्स सेटलमेन्ट्स
४.	कच्ची कपास (वेस्ट आदि)	संयुक्त राज्य अमेरिका, यू० के०, आस्ट्रेलिया, चीन, नीदरलेन्ड्स, जापान और बेल्जियम

५.	चमड़ा तथा खाल	यू० के०, संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी, जापान, फ्रान्स, इटली और हालैंड
६.	तिलहन (Oil seeds)	यू० के०, फ्रान्स, जर्मनी, हालैंड, इटली, बेल्जियम और लंका
७.	अभ्रक, मैंगनीज़ आर्टिक मैटल्स् और ओर्स तथा लाख (Metals & Ores)	यू० के०, संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान, स्टेट्स मैटलमेन्ट्स, जर्मनी, बेल्जियम, फ्रान्स और इटली
८.	मसाले (मुख्यतः काली मिर्च)	कनाडा, आस्ट्रेलिया, संयुक्त-राज्य अमेरिका, आदि

हमारे आयात और निर्यात में किन चीजों का कितना महत्व है, उसका अनुमान नीचे दी हुई तालिकाओं* से लगाया जा सकता है:—

आयात के मुख्य पदार्थ

(करोड़ रुपयों में)

नाम पदार्थ।	१६४६ जन० दि०	१६४६-५० अप्रैल मार्च
प्रथम श्रेणी:—		
फल और तरकारी	६·५५	६·६६
अनाज दाल और आटा	१०५·४२	६६·५५
प्रोवीजन्स और ओइलमेन्स स्टोर्स	६·२८	७·६६
तम्बाकू	२·१६	२·२३
योग प्रथम श्रेणी	१२३·४४	११६·४६

* भारतीय अर्थशास्त्र की रूपरेखा—शंकर सहाय सक्सेना पृष्ठ २६१-६२

द्वितीय श्रेणी:—		
अधातु खान से निकलने वाले पदार्थ आदि	२·६१	२·७१
तेल सब प्रकार के—वनस्पति, खनिज और पशु-सम्बन्धी	५८·८६	५६·१६
कपास कच्चा और खारिज	६०·६४	५६·८४
कच्चा ऊन	३·८०	३·०३
विविध	५·६६	७·०२
योग द्वितीय श्रेणी	१३२·१७	१२८·७६
तृतीय श्रेणी:—		
रासायनिक पदार्थ		
ड्रग्ज़ और दवाइयाँ	२१·२५	१६·१३
चाकू छुरी आदि	१६·३६	१५·४२
रंग	१२·४२	११·११
बिजली का सामान	१५·०८	१३·०२
सब प्रकार की मशीनरी	१०७·६३	१०५·५२
धातु, लोहा और स्पात	१४·०७	१०·७०
धातु अन्य	२१·४२	१८·१६
कागज, पेस्ट बोर्ड व स्टेशनरी	१४·७२	६·७१
मोटर आदि	२६·३२	२३·४६
कपास का सूत और तैयार माल	२५·२१	१८·४१
ऊन का सूत और तैयार माल	७·४३	५·६८
अन्य टैक्सटाइल्स	२१·१६	१६·०५
अन्य	१६·२३	१५·५७
योग तृतीय श्रेणी	३३५·४४	२८८·५८
योग तीनों श्रेणी	६०७·६३	५४७·५७

निर्यात के मुख्य पदार्थ

(करोड़ रुपयों में)

नाम पदार्थ	१९४९ जन० दि०	१९४९-५० अप्रैल मार्च
प्रथम श्रेणी:—		
मछली	१·६०	१·६१
फल और साग	६·८३	७·२५
अनाज दाल और आटा	०·०४	०·०४
मसाला	१४·५२	१८·५७
चाय	७७·९५	७२·२४
तम्बाकू	८·६५	९·२१
योग प्रथम श्रेणी	१११·६९	११२·९०
द्वितीय श्रेणी:—		
अधातु खान से निकलने वाले पदार्थ	६·१३	७·३१
गोंद लाख तथा रेजिन्स	८·०९	८·९९
कच्चा चमड़ा	६·२४	६·९६
कच्चे धातु	४·५९	६·९५
तेल वनस्पति खनिज व पशु	७·९६	८·८०
बीज	९·०५	१४·७९
कपास कच्चा तथा खारिज	१५·८८	१९·३४
पटसन कच्चा तथा खारिज	२१·२१	१५·७६
ऊन कच्चा तथा खारिज	२·५४	३·७१
दूसरा टेक्सटाइल माल	३·११	१·६५
अन्य	३·६१	३·८६
योग द्वितीय श्रेणी	९३·२९	१०३·४६

तृतीय श्रेणी:—

कपास का सूत व तैयार माल	४६·३७	७२·५९
पटसन यार्न एवं तैयार माल	१२५·८४	१२४·७५
ऊनी यार्न एवं तैयार माल	३·४२	३·६४
अन्य	९·५५	१०·९२
योग तृतीय श्रेणी	२०९·४३	२४०·१९
योग तीनों श्रेणी	४०५·६९	४५१·५१

अब आयात और निर्यात के सम्बन्ध में थोड़ा विस्तार से वर्णन करेंगे।

आयात (Imports) -

निम्नलिखित आँकड़ों से भारत के आयात का पता चलता है:—

आयात के कुछ विशेष पदार्थ (लाख रुपयों में)

श्रेणी	पदार्थ	१९३८	१९४५	१९४६	१९४८	१९४९
प्रथम	१—अनाज दाल आटा	१०,८३	९,५५	१५,३१	५७,१९	९८,१०
(खाद्य पेय	२—प्रोवीजन्स	२,५५	१,४६	२,५६	५,३२	९,२७
तथा	३—शराब	१,७४	१,३४	२,८९	१,०[illegible]	१,६६
तम्बाकू)	४—तम्बाकू	१,०४	३,६७	३,१९	३,२८	२,१८
	५—मसाला	२,३४	१,४९	४,२५	३,६६	४,१३
द्वितीय						
	१—कच्चा माल	११,०७	२४,४९	२२,९५	४६,५७	७६,७७
(कच्चा	२—तेल (केरोसीन)	१६,२८	९०,२९	३८,२४	३३,७५	५८,०१
माल एवं	३—ऊन	७२	२,१५	२,७९	२,७५	३,८०
अनिर्मित	४—अधातु वस्तुयें	१,९९	६,५९	३,७९	२,६३	२,९०
पदार्थ)	५—लकड़ी	२,६९	४	१३	४,९७	३,४७
तृतीय	१—मशीनरी	१९,८१	१९,७४	३१,२३	७६,४६	१०७,५७
	२—वाइन	६,७४	७,४७	१६,४६	३०,४२	२९,२९
	३—कपास का यार्न तथा कपड़ा	१४,६१	१,४८	३,५५	१३,४०	२५,१६
	४—केमीकल्स व ड्रग्ज़	५,७३	९,५४	१३,०२	२६,६३	२१,२४
	५—नॉन फेरस धातु	४,२०	५,४१	१२,९७	१८,४०	२०,१९
(निर्मित	६—चाकू, छुरी, औजार	५,८३	५,२३	१०,३६	१४,८२	१९,४९
पदार्थ)	७—बिजलीका सामान	३,३३	४,२३	५,३२	९,६०	१५,०७
	८—कागज	३,९१	५,०३	७,३०	११,२६	१४,५८
	९—लोहे और फौलाद का सामान	६,४५	६,३९	४,५३	८,३५	१३,९२
	१०—रंग आदि	३,८२	१०,१७	१२,३४	१७,३४	१२,४२
	११—ऊनी यार्न तथा ऊन का माल	२,२६	८७	६,०८	६,७९	७,३९

आयात सम्बन्धी कुछ नवीन आँकड़े इस प्रकार हैं:—

(लाख रुपयों में)

पदार्थ	फरवरी		११ माह अप्रैल से फरवरी	
	१९५२	१९५१	१९५१-५२	१९५०-५१
खाद्य पदार्थ	१७,९८	६,१७	२,२५,६०	६०,८८
कच्चा माल	२६,८७	१५,४७	२,३१,६६	१,८०,४४
निर्मित माल	२६,१६	२६,५१	३,०६,६६	२,३६,१२
अन्य	६६	१५	४,५६	१,६३
कुल आयात	७७,६७	५१,३०	७,७२,१४	५,०६,३७

दिसम्बर १९४७ और नवम्बर १९४८ के बीच भारत के आयात सबसे अधिक (लगभग ४२६ करोड़) थे। इसका प्रमुख कारण देश में अन्न का संकट होना था। तेल भी काफी मात्रा में विदेशों से मंगाना पड़ा। इसके अतिरिक्त ५४ करोड़ रुपये का अनाज, ४४ करोड़ रुपये की कपास, ७५ करोड़ रुपये की मशीनरी, २५ करोड़ रुपये की दवाइयाँ, २८ करोड़ रुपये की मोटर आदि और १८ करोड़ रुपये का रंग भी १९४८ में ही मंगाना पड़ा। बंटवारे के कारण हमको कपास भी विदेशों से मंगानी पड़ी। जिन देशों से समान मंगाया जाता है उनकी सूची ऊपर भी एक तालिका में दी जा चुकी है।

निर्यात (Exports)

नियात की स्थिति निम्नलिखित आँकड़ों से स्पष्ट है:—

हमारे निर्यात

(लाख

देश	१९३८			१९४६		
	आयात	निर्यात	संतुलन + अथवा -	आयात	निर्यात	संतुलन + अथवा -
कामनवैल्थ के देश-कुल	६५,१६	७४,६४	+ ९,४८	१४७,६६	१३३,६२	- १४,०४
० के०	४८,१८	५५,२०	+ ७,०८	१००,९२	६५,४०	-३५,५२
आस्ट्रेलिया	२,०४	३,००	+ ९६	९,८४	११,१६	+ १,३२
पाकिस्तान	—	—	—	—	—	—
अन्य देश- योग	८८,३२	८७,००	- १,३२	११७,४८	१४४,७२	+२७,२४
यू० एस० ए०	११,४०	१३,४४	+ २,०४	४६,३२	७०,०८	+२३,७६
मिश्र देश	२,६४	१,६९	- ९५	१२,६०	२,३६	- १०,२७
ईरान	३,३६	७२	-२,६४	२५,६८	२,६४	- २३,०४
वर्मा	२२,६८	१०,०८	-१२,६०	३७२	६,६०	+ २,८८
कुल व्यापार	१,५३,४८	१६१,६४	+८१६	२,६५,४४	२,७८,६४	+ १३२०

की दिशा

रुपयों में)

१९४८			१९४९		
आयात	निर्यात	संतुलन + अथवा —	आयात	निर्यात	संतुलन + अथवा —
२०९,४१	२०७,७३	—१,६८	२८,४५२	२३०,७६	—५३,७६
१३३,९९	९७,१८	—३६,७१	१,७३,२८	१११,९६	—६१,३२
१८,५४	२३,७९	+५,२५	२२,२०	२४,४८	+२,२८
१२,२७	३८,२१	+२५,९४	२३,०४	१९,९२	—३,१२
२४५,८७	२११,९५	—३३,९२	३३७,०८	१९४,४०	—१४२,६२
१०८,१३	७७,४६	—३०,६७	९९,८४	६२,५२	—३१,३२
२५,९७	६,५८	—१८,३९	४३,९२	६,३०	—३७,६२
१९,१९	२,४०	—१६,७९	३०,६०	५,०४	—२५,५६
१७,८७	११,५१	—५,३६	१६,२०	९,३६	—६,८४
४५५,२८	४१९,६८	—३५,६०	६२१,६०	४२५,१६	१९६,४४

निर्यात सम्बन्धी कुछ नवीन आँकड़े इस प्रकार हैं:—

(लाख रुपयों में)

पदार्थ	फरवरी		११ माह अप्रेल से फरवरी	
	१९५२	१९५१	१९५१-५२	१९५०-५१
निर्यात:—				
खाद्य पदार्थ	११,५३	१४,६३	१,४४,४८	१,२०,२१
कच्चा माल	८,१५	१३,४५	१,१९,७१	९७,७२
निर्मित पदार्थ	२३,८२	३२,३२	३,७३,६६	२,७२,०१
अन्य	३३	२३	३,[illegible]२	२,३३
	४३८३	६०,५३	६,४१,०७	४,९२,२७
कुल पुनर्निर्यात	८१	७८७	१३,१६	२४३०

भारत की निर्यात की वस्तुओं में आज सबसे ऊँचा स्थान जूट के माल का है। कच्चा जूट पाकिस्तान से न मिलने के कारण इस निर्यात में कमी आ गई है। किन्तु आशा है कि भविष्य में भारत में उपयुक्त मात्रा में जूट मिल सकेगा और जूट का निर्यात बढ़ेगा।

निर्यात की दूसरी प्रमुख चीज है कपास (waste) तथा सूती कपड़े। बंटवारे के कारण हमको अच्छी कपास से भी हाथ धोना पड़ा और देश में कपास का संकट (Cotton Crisis) छा गया, किन्तु अब अन्य देशों से आयात होने के कारण आशा है कि हमारा यह निर्यात भी दिन दूना रात चौगुनी उन्नति करेगा। जिन देशों में हमारे माल की खपत की आशा है उनके नाम हम लिख चुके

तीसरी प्रमुख वस्तु है–चाय, जिसकी कि सबसे अधिक खपत यू० के० तथा यू० एस० ए० में होती है। आस्ट्रेलिया भी अच्छा खरीददार है। चाय के निर्यात के आंकड़े इस प्रकार हैं:—

	लाख रुपयों में
१९४३-४४	३,७८५
१९४५-४६	३,५५२
१९४८	३,७२
१९४९	७,८६२

चौथी निर्यात की वस्तु है–बनस्पति तेल तथा बीज आदि, जिनके निर्यात के आँकड़े ये हैं :—

(करोड़ रुपयों में)

पदार्थ	१९३८	१९४२	१९४९
बीज	१५	१०	९
तेल	१	१३ ५	८

तम्बाकू के निर्यात के आंकड़े इस प्रकार हैं:—

१९४९ (करोड़ रुपयों में)

१९३८—२·६

१९४८— ८

१९४९—१०

खाल, चमड़े आदि का निर्यात भी भारत का एक प्रमुख निर्यात है और उनके आँकड़े इस प्रकार हैं:—

(करोड़ रुपयों में)

	१६३८	१६४८	१६४६
बिना कमाया खाल व चमड़ा	४	६	६·३
कमाया हुआ खाल व चमड़ा	५	१२	१५

छठवां परिच्छेद

भारत पाकिस्तान व्यापार

(Indo-Pakistan Trade)

भारत का बँटवारा एवं उसके परिणाम
(Division of India & Its Consequences)

सन् १९४२ के आन्दोलन ने ब्रिटिश सरकार को यह चेतावनी दे दी थी कि युद्ध के उपरान्त उनको भारत की स्वतन्त्रता का प्रश्न हल करना ही होगा। लड़ाई समाप्त होने पर भारत की सेना (जल, थल, वायु) में भी कुछ कारणों से असन्तोष छा गया। इधर इङ्गलैन्ड में मजदूर पार्टी चुनाव में जीत गई। वह भारत को स्वतन्त्र करने के पक्ष में थी। अतएव भारत को स्वतन्त्र करना निश्चय कर दिया गया, किन्तु मुस्लिम लीग की हठ के कारण भारत के दो टुकड़े हो गये। भारतीय कांग्रेस ने विवश होकर इस योजना को स्वीकार किया। आशा तो यह थी कि देश के बँटवारे के पश्चात् भारत के दोनों खण्डों में पूर्ण शान्ति स्थापित हो जायगी और उनमें लोग प्रेम व स्नेह के साथ रहेंगे। किन्तु दुर्भाग्य से बँटवारे के एक दम बाद साम्प्रदायिक अशान्ति के बादल मंडराने लगे। भारत को हिन्दुओं की और मुसलमानों की पाकिस्तान को भगदड़ मच गई। साम्प्रदायिक झगड़ों में सहस्त्रों जानें गईं, अनेक बेघर हुये और शरणार्थियों का एक नया वर्ग उत्पन्न हो गया। पाकिस्तान से भारत की अपेक्षा अधिक लोग भागे। फिर जूनागढ़, हैदराबाद और काश्मीर की समस्यायें खड़ी हो गईं। किन्तु काश्मीर की समस्या आज भी उसी स्थिति पर है

जहाँ कि वह प्रारम्भ में थी। थोड़े से शब्दों में, यद्यपि १५ अगस्त, १९४७ के दिन भारत को स्वतन्त्रता मिली किन्तु स्वतन्त्रता के साथ ही साथ बँटवारे का दानव भी इस दिन ही आया और इस दानव ने प्रायः दोनों ही खण्डों में आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक संकट के बीज बो दिये।

जिन भागों में मुसलमान अधिक रहते थे (जैसे उत्तर पश्चिम सीमा प्रान्त, बलूचिस्तान और सिन्ध पाकिस्तान के हिस्से में आये। पंजाब और बङ्गाल के प्रान्तों में पूर्वी पंजाब और पश्चिमी बङ्गाल, जहाँ हिन्दुओं की जन संख्या अधिक थी, भारत के अङ्ग बने, और शेष भाग पाकिस्तान में सम्मिलित हो गये। रियासतों को स्वतन्त्रता थी कि वे भारत के किसी भी खंड (भारत अथवा पाकिस्तान) के साथ मिल जायें। इस बँटवारे के दुष्परिणाम एक नहीं अनेक हैं। १९४१ की जनगणना के अनुसार कुल भारत की जनसंख्या ४० करोड़ थी, किन्तु बँटवारे के अनुसार भारत की जनसंख्या ३३ करोड़ और पाकिस्तान की ७ करोड़ रही। इसके विपरीत भारत का क्षेत्रफल १२,२१ हजार वर्ग मील और पाकिस्तान का ३६१ हजार वर्ग मील रहा। दूसरे शब्दों में सम्पूर्ण भूमि का ७१% भाग भारत के हिस्से में आया जब कि जन संख्या का ८२% भाग भारत में ही रहा। १९५१ की जनगणना के अनुसार विभाजित भारत की आबादी ३४·७ करोड़ है। इस प्रकार यह अनुपात शरणार्थियों के आवागमन के कारण और भी विषम हो गया है। बँटवारे का सबसे बुरा परिणाम तो यह हुआ कि भारत के वे भाग जहाँ अनाज तथा कच्चे माल का उत्पादन अधिकता से होता था, पाकिस्तान के पास चले गये। पश्चिमी पाकिस्तान में लगभग ६ लाख टन गेहूँ और १३ लाख टन चावल अधिक उत्पन्न होता है, जो कि निर्यात कर दिया जाता है। अविभाजित पंजाब के ६५% भाग (जहाँ नहरों की

अधिकता है और जो इस कारण "नहरों का राजा" कहा जाता है) में से ४३% भाग पाकिस्तान में रह गया। इसका परिणाम यह हुआ कि भारत में अन्न की कमी हो गई। विवश होकर भारत को अनाज का आयात करना पड़ा। १९५१ में ३·७ मिलियन टन अनाज बाहर से मँगाया गया। इसी आयात के कारण व्यापार का संतुलन भारत के पक्ष में नहीं रहा।

उद्योगों पर भी बँटवारे का बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। भारत से जो शरणार्थी पाकिस्तान गये, उनमें अधिकतर कुशल श्रमिक तथा अच्छे कारीगर थे। अतएव भारत में कुशल कारीगरों का अभाव हो गया। किन्तु इसके विपरीत पाकिस्तान में पूँजी तथा अनुभवी उद्योगपतियों का अभाव पड़ा, क्योंकि पश्चिमी पाकिस्तान में जो धनाढ्य हिन्दू व्यापारी तथा उद्योगपति थे, वे भारत आ गये। अविभाजित भारत में कुल ३९४ सूती कपास के मिल थे। बँटवारे के फल स्वरूप भारत में ३८० और पाकिस्तान में केवल १४ ही मिल रह गये। किन्तु विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि यद्यपि पाकिस्तान के हिस्से में केवल १४ ही सूती कपास के कारखाने पड़े, कपास के उत्पादन वाले कुल भाग का ¼ से भी अधिक भाग उसके हिस्से में आ गया। बँटवारे के बाद कपास की स्थित इस प्रकार हो गई :—

कपास

	क्षेत्रफल मिलियन एकड़ में				उत्पादन लाख गाँठों में			
	१९४७	१९४८	१९४९	१९५०	१९४७	१९४८	१९४९	१९५०
भारत	११·७	१०·७	११·३	११·८	२२	२२	१७·७	२१·७
पाकिस्तान	३·०	२·८	२·८	अज्ञात	११	१०	१२	नोट

उसी प्रकार अविभाजित भारत में जूट के ११३ कारखाने थे। बँटवारे के परिणाम स्वरूप पाकिस्तान में केवल २ और भारत में १११ कारखाने रह गये। किन्तु, जूट के उत्पादन का ७३% भाग पाकिस्तान के हिस्से में आया। फलस्वरूप भारत के जूट के कारखानों में त्राहि त्राहि मच गई और भारत को जूट का आयात तथा उसका अधिक उत्पादन करना पड़ा। जूट का सङ्कट अभी भी दूर नहीं हुआ है। इस सम्बन्ध में कुछ आँकड़े इस प्रकार हैं :—

जूट

	क्षेत्रफल लाख एकड़ में				उत्पादन लाख गाँठों में			
	१९४७	१९४८	१९४९	१९५०	१९४७	१९४८	१९४९	१९५०
भारत	७	८·३	१२	अज्ञात	१७	२१	३१	नोट
पाकिस्तान	२१	१९	१६	१२·६	६८	५५	३३	४३·६

हाँ, अन्य चीजों के उत्पादन में (जैसे वनस्पति, आयल सीड्स, तम्बाकू, चाय, काफी, रबड़) भारत की स्थिति अच्छी है। आयल सीड्स की स्थिति निम्नांकित आँकड़ों से ज्ञात होती है:—

आयल सीड्स

वर्ष	भारत		पाकिस्तान	
	क्षेत्रफल (००० एकड़)	उत्पादन (००० टन)	क्षेत्रफल (००० एकड़)	उत्पादन (००० टन)
१९४७	२४	५·२	१·५	·४
१९४८	२३	५·१	१·६	·४
१९४९	२४	४·५	१·६	·४
१९५०	२४	५·१	१·५	·४

पाकिस्तान में १½ लाख टन तम्बाकू होती है और भारत में इसकी दो गुनी। काफी तो अधिकांश रूप में केवल भारत में ही होती है लगभग १६,००० टन प्रति वर्ष। चाय भी भारत में ४०५ मिलियन पौंड और पाकिस्तान में केवल ६० मिलियन पौंड होती है। हाँ, गाय तथा भैंस आदि पशु अवश्य पाकिस्तान में अधिक हैं; अतः चमड़ा खाल भी पाकिस्तान में अधिक होता है। खनिज पदार्थों के सम्बन्ध में तो बंटवारे ने पाकिस्तान को शून्य कर दिया और भारत को उनका एकाधिकार दे दिया है। निम्नलिखित आँकड़े इस बात के साक्षी हैं:—

खनिज पदार्थ

खनिज पदार्थ का नाम	भारत	पाकिस्तान
कुल कोयला (मिलियन टन में)	६०,०००	३००
वरकेबिल रिजर्व आव कोल (मिलियन टन)	१६,४७६	१६६
लोहा (लाख टन)	[illegible]३	—
तांबा (,, ,,)	३·३	—
मैंगनीज (,, ,,)	४·६	—
कुल वेक्साइट रिज ज (मिलियन टन में)	२५०	—
हाई ग्रेड ,, ,, (,, ,, ,,)	३५	—
पैट्रोलियम (मिलियन गैलन)	६६	३३
अवरक (Cwts) (१६४८)	१,५१,६०२	—
क्रोमाईट (हजार टन)	३४·७	२०·५
जिपसम (,, ,,)	५०	३६

अखिल भारतीय कांग्रेस ने जब बंटवारा स्वीकार किया था, तब उसने स्वप्न में भी नहीं विचारा था कि इसके इतने भीषण दुष्परिणाम होंगे। उसकी तो धारणा यह थी कि आजादी मिलने पर (भले ही वह बंटवारे के साथ हो) हिन्दू तथा मुस्लिम दोनों पक्षों में पूर्ण सहयोग रहेगा और साम्प्रदायिक झगड़े दूर हो जायेंगे। किन्तु यह धारणा गलत निकली, क्योंकि बंटवारे के बाद ही अशान्ति अधिक बढ़ गई और शरणार्थियों की समस्या खड़ी हो गई। काँग्रेस की यह भी धारणा थी कि दोनों पक्ष सहयोग के साथ रहेंगे और एक दूसरे की कमी को प्रेम तथा शान्ति से पूरा कर देंगे। सचमुच में व्यापार तथा व्यवहार सम्बन्धी यह सारी बातें आपस की थीं जिन्हें एक समझौते के द्वारा सुन्दरता से हल किया जा सकता था। यह भी आशा थी कि भारत तथा पाकिस्तान के बीच जो व्यापार तथा वस्तुओं का आवागमन विभाजन के पूर्व चल रहा था, वह चालू रहेगा। अतएव आर्थिक संकट का तो सपने में भी विचार न था, किन्तु यह धारणा भी झूठी निकली। अविभाजित भारत का आन्तरिक व्यापार बहुत चढ़ा चढ़ा था (कुछ विशेषज्ञों की सम्मति में तो वह विदेशी व्यापार से १०-१५ गुना था) किन्तु विभाजन के कारण पाकिस्तान, जो पहले हमारा ही एक अंग था, विदेश गिना जाने लगा और हमारे आन्तरिक व्यापार को बड़ी क्षति
।

१५ अगस्त, १९४७ को, जब कि भारत का बंटवारा किया गया, यह भी तय हुआ था कि कम से कम २८ फरवरी १९४८ तक आन्तरिक व्यापार में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होगा तथा वस्तुओं का आना जाना पूर्ववत चालू रहेगा, अर्थात् पाकिस्तान तथा भारत के बीच के व्यापार में किसी प्रकार का भी प्रतिबन्ध (प्रशुल्क या चुंगी) नहीं लगाया जायगा। इसी हेतु

पाकिस्तान तथा भारत की सरकारों के मध्य एक समझौता (Standstill Agreement) भी हो गया। परन्तु उसके होते हुये भी पाकिस्तान ने जूट के निर्यात पर कर (Export duty) लगाना शुरू कर दिया, जिसके फलस्वरूप भारत को जूट के आयात में बड़ी कठिनाई होने लगी। भारत ने इसके विरुद्ध आवाज भी उठाई, किन्तु पाकिस्तान चुप साधे रहा। यथास्थिति समझौता (Standstill Agreement) समाप्त होने पर १ मार्च १६४८ से प्रशुल्क प्रतिबन्ध (Tarrif restrictions) तथा आयात निर्यात के लाइसेन्सिग (Licensing) के लिये पाकिस्तान विदेश घोषित कर दिया गया। इससे आर्थिक संकट और भी बढ़ गया। विवश होकर दोनों के बीच फिर एक समझौता हुआ।

भारत पाकिस्तान के बीच पहला समझौता
(The First Agreement Between India & Pakistan)

मई १६४८ में १ वर्ष के लिये भारत तथा पाकिस्तान के मध्य जो समझौता हुआ था उसकी प्रमुख शर्तें इस प्रकार थीं:—

भारत पाकिस्तान व्यापारिक समझौता १९४९

भारत पाकिस्तान को देगा			पाकिस्तान भारत का देगा		
वस्तु	मात्रा		वस्तु	मात्रा	
कोयला	२१,६६,०००	टन	कच्चा जूट	५०,००,०००	गाँठ
कपड़ा तथा यार्न	४००,०००	गाँठ	कच्चा कपास	६,५०,०००	,,
लोहा तथा इस्पात	६०,०००	टन	अनाज	१,७५,०००	टन
कागज	७,५००	टन	जिपसम	१,०००	,,
रासायनिक पदार्थ	१,२७०	,,	नमक	२०,००,०००	मन
सीमेन्ट	२,५००	,,	पोटेशियम-नाइट्रेट	५,०००	टन
पेन्ट वारनिश	२,५००	,,	पशु	५५०	हेड्स
ट्यूब टायर	१८,००,०००	,,			
जूट का माल	५०,०००	,,			
माइकाब्लान्स	२,०००	,,			
ऊनी माल	११,००,०००	,,			
सरसों का तेल	२०,०००	,,			
मूंगफली का तेल	५,०००	टन			
मलावारकीलकड़ी	१०,०००	,,			
टायलेट साबुन	२,०००	,,			
तम्बाकू	७,००,०००	पौंड			

किन्तु यह समझौता भी सफल न हुआ क्योंकि पाकिस्तान शर्तों के विरुद्ध कार्य करने लगा। पूर्वी बंगाल (पाकिस्तान) की सरकार ने जूट का निर्यात रोकने का पूरा प्रयत्न किया। जिस माल के लिये भारत के व्यापारियों ने दाम भी चुका दिये थे, उसे पूर्वी बंगाल में रोक दिया गया। यहां तक कि वह जूट जो कि रेलगाड़ियों में भारत को आ रहा था उसे भी रोक रक्खा गया। इस प्रकार पाकिस्तान ने अपने यहां से माल भारत को

जाने में अनेक रुकावटें पैदा कीं, किन्तु भारत से पाकिस्तान को माल जाता रहा। समझौते के अनुसार यह तय हुआ था कि कपास के बदले में भारत सूती कपड़े पाकिस्तान को देगा किन्तु पाकिस्तान ने भारत से कपड़ा मंगाना बन्द कर दिया। अतः व्यापार का संतुलन भारत के विरुद्ध हो गया। अप्रैल-मार्च, १९४९ में व्यापार का संतुलन ३२.६७ करोड़ रुपये से विपक्ष में था।

द्वितीय व्यापारिक समझौता, १९४९

(The Second Agreement Between India & Pakistan.)

२४ जून १९४९ को भारत तथा पाकिस्तान के बीच दूसरा व्यापारिक समझौता हुआ। इसके अनुसार भारत ने १५० हजार गांठें सूती कपड़े और ८० हजार टन लोहा तथा इस्पात पाकिस्तान को देने का वचन दिया, और बदले में पाकिस्तान ने ४० लाख गांठ जूट तथा ४ लाख गांठें कपास देने का वायदा किया। भारत ने १.७ लाख टन कोयला तथा कुछ निर्मित माल भी देने को कहा। परन्तु दुर्भाग्यवश इस समझौते की भी वही दशा हुई जो पहले की हुई थी। समझौते पर हस्ताक्षर तो कर दिये परन्तु शर्तों का पालन करने की पाकिस्तान ने चिन्ता नहीं की। भारत की चीजों के विरुद्ध पाकिस्तान में प्रचार किया गया। भारत की अपेक्षा अन्य देशों की वस्तुओं को पूर्वाधिकार (Preference) दिया। १७ अगस्त १९४९ को पाकिस्तान की सरकार ने भारत से आने वाले कपड़ों पर मूल्यानुसार (Advalorem) १५ से १८ % की ड्यूटी लगादी और उच्च श्रेणी के कपड़े पर वर्तमान ड्यूटी को ३०% से ३६% कर दिया। इसके विपरीत उसने अन्य देशों से आने वाले कपड़ों पर आयात कर आधे कर दिये। फिर २१ सितम्बर १९४९ को पाकिस्तान ने मिल के बने कपड़ों तथा

भारत से आने वाली अन्य चीजों के सम्बन्ध में साधारणतः खुले लाइसेन्स (Open General Licence) की नीति को भी त्याग दिया और १२ नवम्बर से तो आयात के लाइसेंन्स देना ही बिलकुल बन्द कर दिया। अतः भारत-पाक व्यापार ठप्प हो गया।

भारतीय रुपये का अवमूल्यन

(The Devaluation of the Indian Rupee)

२१ सितम्बर १९४९ को भारत ने संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के डालर के सम्बन्ध में अपने रुपये का अवमूल्यन करना निश्चय कर लिया। स्टर्लिंग क्षेत्र के सभी देशों ने अपनी २ मुद्रा का अवमूल्यन किया किन्तु पाकिस्तान ने एक दूसरा ही मार्ग अपनाया। उसने अवमूल्यन न करना (Non Devaluation) निश्चय किया। भारत और पाकिस्तान के इस भिन्न निश्चय के कारण भारत-पाक व्यापार में अनेकानेक आपत्तियां आईं। पाकिस्तान के १०० रुपये के माल के लिये भारत को १४४ रुपये देने पड़े। दूसरे शब्दों में पाकिस्तान से माल मंगाने में भारत को पहले की अपेक्षा ४४% और अधिक देना पड़ा, जबकि उसे अपने निर्यात के लिये बहुत थोड़े पाकिस्तानी रुपये मिले। पाकिस्तान के रुपये के अवमूल्यन के लिये भी उससे कहा गया। किन्तु वह प्राथना व्यर्थ रही। भारतवर्ष को विवश होकर अपने कारखानों को चलाने के लिये ऊंचे मूल्य पर ही कपास, जूट तथा खाद्य पदार्थ पाकिस्तान से खरीदने पड़े और इस विवश व्यवहार में पाकिस्तान ने लाभ उठाया।

भारत के सम्मुख एक कठिन समस्या उपस्थित हो गई। अपनी मिलों को चलाने के लिये उसको ४४% अधिक मूल्य देना पड़ा किन्तु वह जूट के माल के दाम बढ़ा नहीं सकता था, क्योंकि ऐसा करने से उसका निर्यात व्यापार और भी कम हो जाता।

अतः भारत के जूट मिल ऐसोसियेशन ने पाकिस्तानी जूट को खरीद बन्द कर दी है। यही दशा कपास के सम्बन्ध में भी रही। पाकिस्तान के पास जितनी अतिरिक्त कपास थी, वह उसने अन्य देशों को दी और बदले में उनसे मशीनरी आदि प्राप्त की। भारत की सरकार को पूर्ण विश्वास हो गया कि पाकिस्तान के साथ कोई लम्बा समझौता कार्यान्वित नहीं हो सकता। अतएव उसने विवश होकर स्वयं अपने देश में ही अधिक जूट तथा कपास के उत्पादन का आन्दोलन प्रारम्भ किया। यही नहीं, मिश्र देश, पूर्वी अफ्रीका तथा अन्य देशों से कपास का आयात भी किया। उसने कुछ वस्तुओं पर निर्यात कर लगा दिया। पाकिस्तान ने भारत में जूट का आना बन्द किया, उस कदम के प्रत्युत्तर में भारत ने भी दिसम्बर १९४९ से कोयले का निर्यात बन्द कर दिया। इस पर पाकिस्तान ने ऐसे जूट का निर्यात बन्द कर दिया जिसके लिये भारत के व्यापारी दाम भी दे चुके थे।

नेहरू-लियाकत पैक्ट एवं तृतीय व्यापार समझौता, १९५०

(The Nehru Liaquat Pact & The Third Trade Agreement, 1950)

१९४९ के बाद पूर्वी पाकिस्तान में फिर राजनैतिक अशांति शुरू हो गई। वहां से हिन्दुओं का आना और मुसलमानों का जाना प्रारम्भ हो गया। काश्मीर की समस्या भी इस समय अधिक विकट हो गई। विवश होकर भारतीय सरकार को पाकिस्तान की सीमा पर फौजें लगानी पड़ीं। अब पाकिस्तान को आंखें खुलीं और दोनों देशों के बीच उसको युद्ध की शंका हुई। पाकिस्तान के प्रधान मन्त्री स्वर्गीय श्री लियाकत अली देहली दौड़े और दोनों देशों के प्रधान मन्त्रियों के मध्य एक समझौता हो गया, जो नेहरू लियाकत पैक्ट के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस पैक्ट के

साथ अप्रैल १६५० में कराँची में एक अन्य व्यापारिक समझौते पर हस्ताक्षर भी हो गये। पाकिस्तान की सरकार ने भारत के लिये एक विशेष लेखा (Special Account) स्वीकार कर लिया और यह निश्चय हुआ कि बराबर मूल्य का माल दोनों के बीच (भारतीय मुद्रा के मूल्यानुसार) आये जायगी। पाकिस्तान ने ८ लाख गाँठ जूट भारत को देने का वचन दिया और बदले में भारत ने जूट का माल, सूती कपड़े, कोयला, फौलाद के पदार्थ, सरसों का तेल इत्यादि वस्तुयें देना स्वीकार किया। दुख है कि पहले की ही भाँति यह समझौता भी पाकिस्तान की ओर से कार्यान्वित न हो सका।

भारत-पाक व्यापारिक समझौता–१६५१
(The Indo-Pakistan Trade Agreement, 1951)

२६ फरवरी, १६५१ को पुनः भारत तथा पाकिस्तान के बीच एक व्यापारिक समझौता हुआ, जिसकी अवधि १ वर्ष और ४ माह है और जो ३० जून, १६५२ को समाप्त होगा। इस समझौते की विशेष बात यह है कि भारत ने रुपये का नवीन अनुपात (अर्थात् १४४) भारत = १००) पाकिस्तान) स्वीकार कर लिया है। ऐसा अनुमान है कि इस अवधि में १०० करोड़ रुपये का माल भारत निर्यात करेगा और १५० करोड़ रुपये का सामान पाकिस्तान से मँगायेगा। भारत पाकिस्तान को कोयला, लोहा, कपास, जूट तथा गेहूँ देगा।

१६५१ के समझौते के दो भाग हैं। पहला भाग तो केवल ३० जून, १६५१ तक के लिये ही लागू था, किन्तु द्वितीय भाग १ जुलाई, १६५१ से शुरू होता है और उसकी अवधि ३० जून १६५२ को समाप्त होगी। प्रथम अवधि में भारत की सरकार ने ६ लाख टन कोयला, ५ हजार टन सोफ्ट कोक

(Soft Coke) और १० हजार टन हार्ड कोक (Hard Coke) पाकिस्तान को देना स्वीकार किया। इनके अतिरिक्त ६ हजार टन-पिग आइरन (Pig-Iron), ७ हजार टन स्ट्रकचरल स्टील (Structural Steel), ७,५०० टन लकड़ी (Timber) २५ हजार टन सीमेन्ट, १००० टन कागज, ५,७५० टन सरसों का तेल, ५० टन क्लोरीन (Chlorine), १२,५०० टन जूट का माल, कुछ रद्दी (Waste) कपास तथा ५ लाख रुपये की रबड़ भी उसी अवधि में ही भारत ने देना स्वीकार किया और उनके बदले में पाकिस्तान ने १० लाख गांठ जूट, २½ लाख टुकड़े गाय की खाल तथा चमड़े, २ लाख टुकड़े भेड़ की खाल, कपास, ४½ लाख टन चावल, ३ लाख टन गेहूँ तथा आटा अक्टूबर १६५२ तक और २०,००० टन चना अप्रैल १६५२ तक भारत को देने का वचन दिया।

समझौते के द्वितीय भाग की शर्तें इस प्रकार हैं :—
भारत पाकिस्तान को १५ लाख टन कोयला, २०,००० टन सोफ्ट कोक (Soft Coke), २०,००० टन पिग आयरन, ५६,२०० टन धातु तथा स्टील की वस्तुयें, १५,००० टन लकड़ी, ७५,००० टन सीमेन्ट, ५,००० टन काग़ज़, १७,५०० टन वनस्पति तेल, १५००० टन हेन्डलूम का कपड़ा, ७५००० गाँठ मील का बना कपड़ा, १५००० गाँठ काटन यार्न, ५०,००० टन जूट का माल और लाख की एक निश्चित् मात्रा देगा। पाकिस्तान भारतवर्ष को २५ लाख गाँठ जूट, कपास (जितनी पाकिस्तान में उपलब्ध होगी), १० लाख गाय की खाल के टुकड़े, ६ लाख भेड़ की खाल के टुकड़े और कुछ सरसों की खाल (Mustard-oil Cakes) देगा।

यह समझौता काफी विस्तृत है और माल के मूल्य, पैकिंग व यातायात के सम्बन्ध में उचित प्रबन्ध कर दिया गया है। चुकारे (Payment) की सुविधा के हेतु भारत सरकार ने कराँची में स्थित इम्पीरियल बैंक आफ इन्डिया में अपना लेखा (Account) खोल लिया है। इसके द्वारा सरलता से पाकिस्तान की सरकार को पेमेण्ट किया जा सकता है।

१६५१ के समझौते की प्रथम अवधि तो पूर्णतया समाप्त हो ही चुकी; दूसरी भी जून १६५२ के अन्त में समाप्त हो जायेगी। दोनों देशों के आयात निर्यात के सम्पूर्ण आंकड़े अभी प्राप्त नहीं-हुये हैं, किन्तु यह निश्चय के साथ कहा जा सकता है कि समझौते का अक्षरशः पालन नहीं किया गया। १५ मई १६५१ तक भारत ने ४ करोड़ रुपये का माल निर्यात किया और लगभग ३·५ करोड़ रुपये का सामान पाकिस्तान से मंगाया। वैगन्स की कमी के कारण भारत उपयुक्त मात्रा में कोयला पाकिस्तान को न भेज सका। जुलाई १६५१ तक लगभग ३७,००० टन अनाज पाकिस्तान से आया और जूट तो बहुत ही कम आ सका। ३० जून, १६५१ तक निश्चित मात्रा का केवल ५०% भाग जूट ही भारत में आयात किया जा सका। कपास के ऊँचे दाम होने के कारण उसका भी आयात केवल नाम मात्र को किया गया।

आज भारत की स्थिति थोड़ी भिन्न भी है। जूट तथा कपास का उत्पादन देश के अन्दर भी बढ़ रहा है। दूसरे मिश्र देश तथा अमेरिका से भी हमको कपास की सहायता मिलने लगी है। अन्न का संकट भी कम हो रहा है। बर्मा तथा चीन से भी चावल का आयात शुरू हो गया है। सारांश यह कि अब पाकिस्तान पर भारत की निर्भरता कम होने लगी है और आशा है कि वर्तमान आर्थिक संकट से हम शीघ्र मुक्त हो सकेंगे।

सातवां परिच्छेद

राज्य की आयात एवं निर्यात नीति

(Government Import And Export Policy)

द्वितीय महायुद्ध के व्यापार पर राजकीय नियंत्रण

(Governmental Control On Trade During World War II)

महायुद्ध के युग में अंग्रेजी सरकार ने भारत के आयात निर्यात पर नाना प्रकार के प्रतिबन्ध लगाये। इनका मुख्य उद्देश्य ब्रिटिश सरकार को सहायता पहुँचाना था। निर्यात सम्बन्धी प्रतिबन्ध सामान्य रूप से ये थे:—

(१) शत्रु देशों को माल भेजना बिलकुल बन्द कर दिया;

(२) कुछ विशेष माल मित्र राष्ट्रों को भी नही भेजा जा सकता था;

(३) कुछ विशेष वस्तुयें मित्र राष्ट्रों को केवल विशेष आज्ञा (Special Licence) द्वारा ही भेजी जा सकती थीं; एवं

(४) कुछ देशों के लिये सामान्यतः व्यापार की खुली आज्ञा (Open General Licence) थी अर्थात् उनको वस्तुयें विना किसी लाइसेंस के भेजी जा सकती थीं।

मार्च १९४० से विदेशी मुद्रा पर नियंत्रण करने के लिये सरकार ने यह भी अनिवार्य कर दिया कि निर्यात कर्ता इस बात का प्रमाण पत्र दें कि वह निर्यात से प्राप्त विदेशी मुद्रा का

सरकार के नियंत्रण सम्बन्धी नियमों के अनुसार ही उपयोग करेगा। यह प्रमाण पत्र उपस्थित किये जाने पर ही निर्यात की स्वीकृति दी जा सकती थी।

युद्ध काल में आयात पर भी नियंत्रण किया गया। प्रारम्भ में तो शत्रु राष्ट्रों के अतिरिक्त अन्य किसी भी देश से माल मंगाने की स्वतंत्रता थी। किन्तु मई १९४० से आयात के लाइसेंस (Import licence) की व्यवस्था प्रारम्भ की गई। लगभग ६८ चीजों के आयात पर नियंत्रण किया गया। जनवरी १९४२ से तो कोई भी वस्तु बिना लाइसेंस प्राप्त किये आयात नहीं की जा सकती थी।

युद्धोत्तर काल में व्यापार का लाइसेंसिंग

(Licensing of Trade In The P. W. Period)

आयात व्यापार:—

(Import Trade)

महायुद्ध के समाप्त हो जाने के पश्चात् जुलाई १९४७ तक तो भारत सरकार की आयात नीति (Import Policy) उदार रही। किन्तु अगस्त १९४७ में जब कि देश में जन प्रिय सरकार का शासन हुआ, आयात नीति कड़ी कर दी गई। यहाँ तक कि अपने पौंड-पावने की राशि को भी हम खर्च नहीं कर सके। डालर क्षेत्र से भी कुछ वस्तुओं का आयात बिलकुल बन्द कर दिया गया और अधिकतर प्रयत्न यही था कि यू० के० से ही माल मंगाया जाय। डालर क्षेत्रों के सम्बन्ध में इतनी कड़ी आयात नीति का एक मात्र उद्देश्य डालर के संकट (Dollar Crisis) को हल करना था। किन्तु कुछ परिस्थितियों वश इस कड़ी नीति का प्रभाव हितकर सिद्ध न हुआ। देश के बंटवारे के दुष्परिणाम भारत को दुखी कर ही रहे थे। यातायात की

कठिनाइयों के कारण उत्पादन दिन पर दिन कम होने लगा। आयात की कड़ी नीति के कारण कच्चा माल सरलता से प्राप्त करना कठिन हो गया। विवश होकर जुलाई १९४८ से भारत ने आयात की उदार नीति पुनः अपनाई। व्यापार के लिये सामान्यतः खुली आज्ञा (Open General Licence) के अंतर्गत आने वाली वस्तुओं की संख्या बढ़ाकर ४०० तक कर दी गई। जिन वस्तुओं का आयात बन्द हो गया था, वह अब पुनः प्रारम्भ हो गया। इस उदार आयात नीति के परिणाम भी अच्छे न हुये।

ओपन जनरल लाइसेंस के बुरे परिणाम

(Mal-effects of the Open General Import Policy)

उदार आयात नीति के कारण आयात व्यापार में वृद्धि हुई। फलस्वरूप व्यापार का संतुलन हमारे विपक्ष में हो गया। पौंड पावने की हमारी कमाई नष्ट होने लगी। यही नहीं, हमने अतिरिक्त स्टरलिंग तथा डालर भी खर्च कर डाला। भारतीय व्यापार एवं उद्योग संघों के मंडल (Federation Of Indian Chambers of Commerce and Industry) की सम्मति में ऐसी उदार आयात नीति से चार हानियाँ हुई।

(१) वस्तु निर्माताओं तथा आयात-कर्ताओं को घाटा पहुँचा;
(२) व्यापार का संतुलन विपक्ष में हो गया;
(३) मूल्यवान विदेशी विनिमय व्यय हो गया,
(४) कुछ पुराने उद्योगों के हितों को भी हानि पहुँची; एवं
(५) वस्तुओं के क्रय विक्रय में सट्टे को प्रोत्साहन मिला और बड़ी हानि हुई।

उदार आयात नीति के युग में हमने कितना अधिक सामान मंगाया यह निम्न तालिका से स्पष्ट है:—

यू० के० से भारत के आयात

(लाख रुपयों में)

पदार्थ	१६४८-४६ अप्रैल-फरवरी	१६४७-४८ अप्रैल-फरवरी
सोडियम कार्बोनेट	१३४	४०
कास्टिक सोडा	११४	५६
प्रिंटिंग पेपर	६५	२५
प्रोवीजन्स व ओयल मेन्स स्टोर्स	११२	६६
निर्मित सूती माल तथा यार्न	१६१	८४
कॉटन पीस गुड्स	७८८	१६४
ऊनी माल	१७८	१६६
सूती ऊनी मिश्रित माल	५६	२७
कृत्रिम रेशम	११२	४१
योग	१०५,६७	८१,०७

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि इन वस्तुओं में अनेक ऐसी हैं जो देश में भी बनती हैं। अतः किसी भी कारण से उनका आयात उचित नहीं कहा जा सकता। केवल उदार आयात नीति के

कारण ही इतनी भारी संख्या में वह माल भारत में प्रवेश पा सका। इससे अनेक उद्योगों (जैसे ड्रग्स तथा दवाइयों के उद्योग) पर वज्रपात हो गया। कुछ रासायनिक पदार्थों का तो बनना ही बन्द हो गया। रेशम तथा काँच के उद्योग को भी गहरा धक्का पहुँचा।

अंत में फरवरी १९४९ में भारत सरकार को अपनी आयात नीति में फिर संशोधन करना पड़ा। ओपन जनरल लाइसेंस के अंतर्गत आने वाली चीजों की संख्या बहुत कम (७०) कर दी गई। डालर क्षेत्र से भी आयात कम किये गये। भारत तथा यू० के० के मध्य आर्थिक समझौते में भी आवश्यक संशोधन हुआ और यू० के० ने भारत को हो रहे डालर के घाटे को पूरा करने का वचन दिया। इसके बदले में भारत 'एम्पायर डालर पूल' (Empire Dollar Pool) का सदस्य बन गया। सितम्बर १९४९ में सरकार ने जो आयात नीति अपनाई उसके अनुसार आयात को तीन भागों में बांटा गया:—

(१) वे वस्तुयें जिनके आयात के लिये लाइसेन्स बिल्कुल बंद होंगे।

(२) वे वस्तुयें जिनके आयात के लिये एक निश्चित परिमाण के आधार पर लाइसेन्स दिये जायेंगे, तथा

(३) वे वस्तुयें जिनके आयात के लिये समय पर आवश्यकतानुसार लाइसेन्स दिया जा सकेगा।

डालर क्षेत्र से वस्तु का आयात केवल उसी दशा में हो सकेगा जब कि वह स्टर्लिंग क्षेत्र में उपलब्ध न होती हो। जनवरी १९४८ से अनाधिकृत आयात का चुकारा करने के लिये विदेश रुपया भेजने की जो सुविधा रिजर्व बैंक ने दी थी वह भी

वापिस ले ली गई। सितम्बर १९४९ में रुपये का अवमूल्यन (Devaluation) हो गया था जिसके फलस्वरुप हमारे निर्यात में वृद्धि हुई और व्यापार का संतुलन भारत के पक्ष में होने लगा। परन्तु २५ फरवरी १९४९ को जो नवीन आयात नीति घोषित की गई वह पहले की अपेक्षा कुछ उदार थी। कच्चा कपास, कच्चा रेशम, रेशम के तार, अलौह धातु, भारी रासायनिक पदार्थ और दवाइयां आदि वस्तुओं को स्टर्लिंग क्षेत्र से मंगाने की सुविधा दी गई। इसके अतिरिक्त दुर्लभ मुद्रा प्रदेशों (Hard Currency Areas) से भी कच्चा कपास मंगाने की स्वीकृति दे दी गई। तत्पश्चात् दिसम्बर १९५० तक आयात नीति में कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं हुआ। जनवरी-जून १९५१ के लिये जो आयात नीति घोषित हुई उसमें भी कोई विशेष उल्लेखनीय बात न थी। हाँ, जुलाई-दिसम्बर १९५१ के लिये जो आयात नीति घोषित की गई उसने आयात को विशेष प्रोत्साहन दिया। इसके अनुसार लाइसेंस ६ माह की अपेक्षा १ वर्ष के लिये दिये जाने लगे।

जुलाई-दिसम्बर १९५२ के लिये आयात नीति*
(Import Policy for July -December, 1952)

१५ जून १९५२ को भारत सरकार ने जुलाई-दिसम्बर १९५२ के लिये अपनी आयात नीति की घोषणा कर दी है। इस नवीन नीति का आधार तो जनवरी-जून १९५२ की नीति है; किन्तु कुछ नये परिवर्तन भी हुये। सबसे बड़ा परिवर्तन तो यह है कि आयात कर्त्ताओं को अब केवल इसी आधार पर लाइसेंस नहीं दिया जायगा कि वे युद्ध के पूर्व भी उन देशों से आयात करते रहे हैं जिनसे कि युद्ध काल में व्यापार बन्द हो गया था। इस नवीन आयात नीति के अनुसार केवल उन्हीं फैक्टरियों अथवा

---

* Leader, June 17, 1952, Pages 1 & 5.

औद्योगिक संस्थाओं को आयात के लिये लाइसेंस मिलेगा जिनमें कम से कम ५० श्रमजीवी काम करने वाले हों।

नवीन नीति के अनुसार अब डालर क्षेत्रों से वस्तुओं का आयात बहुत कम हो जायगा। आयात की इस नवीन नीति के अनुसार दो नये "ओपन जनरल लाइसेंस" बनाये गये हैं। (१) Open General Licence—XXIV, और (२) Open General licence—XXV। ये दोनों ३१ मार्च १९५३ तक चालू रहेंगे। प्रथम लाइसेंस दुर्लभ मुद्रा प्रदेशों से तथा द्वितीय लाइसेंस सुलभ मुद्रा प्रदेशों से सम्बन्धित है। इसके द्वारा उन्हीं वस्तुओं का आयात खुला रहेगा, जिनके आयात की व्यवस्था Open General Licence—XXIII में थी। Open General Licence—XXIII, ३० जून, १९५२ को समाप्त हो गया। नवीन नीति में प्रधान परिवर्तन यह है कि लगभग ५० वस्तुयें डालर Open General Licence से स्टर्लिंग Open General Licence को हस्तान्तरित (Transfer) कर दी गई हैं, अर्थात् अब उन वस्तुओं का आयात डालर क्षेत्रों से नहीं किया जा सकता, सुलभ मुद्रा प्रदेशों से ही अब उनका आयात सम्भव हो सकेगा। कुछ वस्तुओं के सम्बन्ध में जो कि आज देश में ही सरलता तथा अधिकता से सुलभ हैं, अभी कोई भी नीति घोषित नहीं की गई है। उनके सम्बन्ध में आवश्यकतानुसार बाद में उचित नीति घोषित कर दी जावेगी। निम्नलिखित वस्तुयें Open General Licence से हटा दी गई हैं—मछली, मक्खन, दूध, चीज, सुइयाँ, ताले, नारियल तथा उसका तेल, कोलतार, अलूमीनियम, पाउडर तथा पेस्ट और लेबोरेटरी के प्रयोग की वस्तुयें। ये सारी वस्तुयें सरलता तथा सुविधा से देश में ही सुलभ हैं। जिन वस्तुओं के सम्बन्ध में आयात नीति बाद में घोषित होगी, उनमें

से प्रमुख ये हैं:—लोहे तथा फौलाद की चीजें, जैसे नट्स, बोल्ट्स, नेल्स, वाशर्स, ग्राइंडिंग वील्स, डिज़ेल इन्जन, मोटर तथा जनरेटर्स, पावर पम्पस्, टेक्सटायल मशीनरी, साबूदाने का आटा, कुछ कागज, सिल्क तथा सिल्क यार्न, कांच का सामान, रेजर ब्लेडस्, टायपरायटर्स, सिलाई की मशीनें, रासायनिक पदार्थ इत्यादि।

निर्यात नीति
(Export Policy)

प्रारम्भ में भारत सरकार की निर्यात-नीति निर्यात को रोकने की थी किन्तु जब से व्यापार का संतुलन अधिक प्रतिकूल रहने लगा (विशेषकर १९४८-४९ के अंत में) भारत सरकार ने अपनी निर्यात नीति में संशोधन किया। इसके परिणामस्वरूप निर्यात को खूब प्रोत्साहन मिला। जुलाई १९४९ में भारत सरकार ने निर्यात प्रोत्साहक समिति (Export Promotion Committee) नियुक्त की। इस समिति ने निर्यात को बढ़ाने के लिये अनेक सुझाव दिये, जिन्हें भारत सरकार ने स्वीकार कर लिया। निर्मित वस्तुओं के निर्यात पर से प्रतिबन्ध हटा लिया गया। जिन वस्तुओं का निर्यात बंद था उनका निर्यात पुनः शुरु हो गया। ओपन जनरल लाइसेंस के अन्तर्गत वस्तुओं की संख्या बढ़ गई। लाइसेंस देने की पद्धति भी बड़ी सरल और सीधी बना दी गई। अब व्यापार मंत्रालय (Commerce Ministry) से ही निर्यात लाइसेंस मिलने की व्यवस्था हो गई। वे कर (Taxes) जो निर्यात में बाधक थे, हटा दिये गये अथवा कम कर दिये गये। इन प्रयत्नों के अतिरिक्त रुपये के अवमूल्यन एवं कोरिया के युद्ध ने हमारे निर्यात को और भी प्रोत्साहन दिया। गत महायुद्ध के उपरान्त प्रथम बार १९५०-५१ में व्यापार का संतुलन भारत के पक्ष

में हुआ। आज भी हम अपने निर्यात को और अधिक बढ़ा कर व्यापार के संतुलन को अपने अधिक अनुकूल कर सकते हैं। यह सम्भव कैसे हो सकता है इसका वर्णन हम एक अगले अध्याय में करेंगे।

आयात एवं निर्यात के नियंत्रण के लिये निर्यात परामर्शदाता समिति (Export Advisory Council) तथा आयात परामर्शदाता समिति (Import Advisory Council) भारत सरकार को उचित सलाह व सहायता देती हैं। भारत सरकार की आयात नीति में कुछ दोष हैं, जैसे आयात लाइसेन्स मिलने में अनावश्यक देरी; नीति की अस्थिरता तथा लाइसेन्स पद्धति की पेचीदगी आदि। अतः १९५० में भारत सरकार ने आयात नियंत्रण जाँच समिति (Import Control Enquiry Committee) नियुक्ति की। इस समिति ने अक्टूबर, १९५० में अपनी रिपोर्ट भी दे दी है और उसमें अनेक महत्वपूर्ण सिफारिशें कीं। समिति ने इस बात पर जोर दिया कि आयात सम्बन्धी नीति और संचालन में स्थिरता लाई जावे, लाइसेंस देने में अनावश्यक देरी न हो तथा आगामी दो वर्षों में ४०० करोड़ रुपये वार्षिक का आयात भारत में हो। वस्तुओं की प्राथमिकता (priority) पर जोर देते हुये समिति ने कहा कि वही वस्तुयें पहले मंगाई जायं जो कृषि एवं उद्योग के विकास में सहायक हों और जो उपभोक्ताओं की आवश्यकतायें पूरी करें। वस्तुओं के मूल्य में अत्यधिक उतार चढ़ाव को भी कम करना चाहिये। लाइसेंस के समय को बढ़ाना चाहिये। नये आयात के व्यापारियों को सुविधा देनी चाहिये। इन सिफारिशों में से भारत सरकार ने अनेकों को स्वीकार भी कर लिया है। आशा है कि अब इस विवेक पूर्ण नीति के अनुसार हमारे देश का व्यापार उन्नति की ओर अग्रसर हो सकेगा।

आठवाँ परिच्छेद

व्यापार का संतुलन एवं उसे अनुकूल बनाने के उपाय

(The Balance Of Trade & The Means To Make It Favourable)

"व्यापार के संतुलन" से अभिप्राय निर्यात तथा आयात के अन्तर (Difference) से है। यदि निर्यात आयात से अधिक है तो कहेंगे कि व्यापार का संतुलन अनुकूल है और यदि आयात निर्यात से अधिक हो तो कहेंगे कि व्यापार का संतुलन प्रतिकूल है। द्वितीय महायुद्ध के पहले तक व्यापार का संतुलन साधारणतः भारत के अनुकूल ही रहा। यह निम्न आँकड़ों से प्रगट है:—

भारत के व्यापार का संतुलन
(लाख रुपयों में)

	व्यापार का संतुलन(प्रायवेट मर्चेन्डाइज)	व्यवहारों का संतुलन (ट्रेजर Treasure का)	संतुलन कुल प्रत्यक्ष व्यापार
१९१३-१४	७८,२७	– ३६,०८	४२,१९
१९१८-१९	७६,३१	– १०,८०	६५,५१
१९२३-२४	५३,१४	– २६,१२	२७,०२

	व्यापार का संतुलन (प्रायवेट) मर्चेन्डाइज	व्यवहारों का संतुलन (ट्रेज़र Treasure का)	संतुलन कुल प्रत्यक्ष व्यापार
१९२८-२९	१,१२,८०	−५०,४१	६२,३९
१९३३-३४	४२,७६	२५,४४	६८,२०
१९३४-३५	२३,४२	५२,५४	७५,९६
१९३५-३६	५,११	३५,४१	४०,५२
१९३६-३७	५१,१९	१३,७१	६४,९०
१९३७-३८	१५,८८	१४,३६	३०,२४
१९३८-३९	१७,५६	११,८८	२९,४४

कुल प्रत्यक्ष व्यापार का संतुलन

(लाख रुपयों में)

प्रथम महा-युद्ध के पूर्व का औसत	युद्ध युग का औसत	युद्ध काल के बाद का औसत	१९३७ १९३८	१९३८ १९३९	१९३९ १९४०
२५,३६	२७,५१	१३,८३	७,८४	११,०८	३९,५०

उक्त आँकड़ों का अध्ययन यह प्रगट करता है कि १९३१ की मन्दी के बाद से व्यापार का संतुलन कम अनुकूल होने लगा; अतः कमी को पूरा करने की दृष्टि से भारतवर्ष ने सोने का निर्यात शुरू कर दिया। इस सम्बन्ध में एक विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि यद्यपि युद्धकाल के पूर्व व्यापार (मर्चेन्डाइज) का संतुलन भारत के पक्ष में रहा भारत सदैव सोने की एक बहुत बड़ी मात्रा "होम चार्जिज" (Home Charges) के नाते यू० के० को भेजता रहा है। पिछले महायुद्ध के पूर्व तक भारत सदैव देनदार (Debtor) देश रहा एवं "होम चार्जिज" (Home Charges) की राशि व्यापार के अनुकूल संतुलन से निकाल कर चुकाई जाती थी। दूसरे शब्दों में हम यों कह सकते हैं कि अपने अदृश्य आयात (Invisible Imports) के लिये भारत अपने प्रत्यक्ष आधिक्य (Visible Surplus)— निर्यात व आयात का अन्तर-का निर्यात करता रहा। सोने का ऐसा निर्यात या चुकारा (Payment) "धन का खिसकना' (Drain Theory) के नाम से विख्यात है। निम्न तालिका से पता चलता है कि विभिन्न वर्षों में कितना सोना "होम चार्ज" के नाम से इस प्रकार बाहर गया:—

होम चार्जिज़

(Home Charges)

३१-३-१९२० तक विनिमय की दर:- १) = १ शि० ४ पें०
१-४-१९२० एवं ३१-३-१९२७ के मध्य दर:-१) = २ शि०
३१-३-१९२७ के पश्चात् विनिमिय दर:-१) = १ शि० ६ पें०

वर्ष		अधिकृत (आफिशल) दर के अनुसार होम चार्जिज़ (करोड़ रुपयों में)
१९०९-१४	(औसत)	२९·५
१९१४-१९	,,	३३·०
१९१९-२४	,,	३५·५
१९२४-२९	,,	३६·५
१९२९-३०		४२·१
१९३०-३१		४१·९
१९३१-३२		४१·२
१९३२-३३		३९·४
१९३३-३४		३८·५
१९३४-३५		३८·०
१९३५-३६		३८·१
१९३६-३७		३६·७
१९३७-३८		३३·७
१९३८-३९		३२·८

अब देखना यह है कि ये "होम चार्जिज़" जिनके लिये कि भारत को सोने का निर्यात करना पड़ा, क्या हैं। "होम चार्जिज" को हम स्टर्लिंग ऋण (Sterling Liability) भी कह सकते हैं। इस ऋण का भार निम्न कारणों से उदय हुआ:—

(अ) भारत में रेलों के निर्माण तथा सिंचाई योजनाओं के लिये धन की आवश्यकता थी। उस समय भारत सरकार की

आर्थिक दशा अच्छी न थी और केवल इंगलैंड में ही पूंजी सरलता, सुविधा तथा सबसे सस्तो दर पर प्राप्त की जा सकती थी। अतएव योजनाओं को पूरा करने के लिये इंगलैंड से स्टर्लिंग उधार लिया गया, इसका व्याज भारत को चुकाना पड़ा।

(आ) राजकीय भंडार (Government Stores) के लिये भी कुछ खर्चा इंगलैंड में करना पड़ता था, जो कि भारत के लिये ऋण हो जाता था।

(इ) इन्डिया आफिस के व्यय (Establishment Charges) का भार भी भारत के खजाने पर ही पड़ता था।

(ई) लन्दन स्थित भारतीय हाई कमिश्नर के कार्यालय का समस्त व्यय भी भारत के लिये ऋण था।

(उ) सिविल तथा मिलिटरी के ब्रिटिश अफसरों (पद-मुक्त अथवा छुट्टी पर) की तनख्वाह, पेन्शन, आनुतोषिक (Gratuities) आदि भी भारत को ही चुकाने पड़ते थे।

(ऊ) अन्य व्यय (जैसे विदेशी पूंजी पर व्याज तथा लाभ व विदेशी नौभारिकों (Shippers), अधिकोषिकों (Bankers) एवं वर्तन अभिकर्ताओं (Commission Agents) की सेवाओं के लिये रुपया भी भारत के लिये ऋण ही था।

यह हर्ष की बात है कि द्वितीय महायुद्ध के युग में भारत ने अपना सम्पूर्ण ऋण भार चुका दिया। वस्तुतः वह केवल ऋण से ही मुक्त नहीं हुआ वरन् अत्यन्त अधिक निर्यात के फलस्वरूप वह लेनदार (Creditor) देश बन गया। पौंड देयता (Sterling Liabilities) पौंड पावने (Sterling Assets) में परिणित हो गई। युद्ध युग में हमारी स्थिति बहुत अच्छी रही। व्यापार का संतुलन देश के पक्ष में था; किन्तु युग के पश्चात् और विशेषकर बंटवारे के बाद स्थिति पुनः बिगड़ने लगी और व्यापार का

संतुलन देश के प्रतिकूल होने लगा। १९५० तथा १९५१ में भाग्यवश अधिक निर्यात के परिणाम स्वरूप व्यापार का संतुलन भारत के अनुकूल हो गया था किन्तु १९५१-५२ में संतुलन फिर प्रतिकूल होने लगा।

१९५१-५२ में व्यापार का संतुलनः
(Balance of Trade in 1951-52)

१९५१-५२ में भारत का कुल निर्यात (पुनर्निर्यात सहित) केवल ७३२.६४ करोड़ रुपया हुआ और आयात ९६५.४० करोड़ रुपया था। पाकिस्तान, अफगानिस्तान, ईरान तथा वर्मा के साथ आन्तरिक व्यापार में भारत को ७८.७३ करोड़ रुपये की कमी (Deficit) हुई, इसमें ७६.१६ करोड़ रुपये की कमी तो अकेले पाकिस्तान के साथ व्यापार में हुई। जल तथा वायु के द्वारा सौदागरी के सामान (Merchandise) में भारत ने जो व्यापार किया, उसमें १४४.८१ करोड़ की कमी हुई (निर्यात ७०१.५७ करोड़, पुनर्निर्यात १३.७६ करोड़ और आयात ८६०.१४ करोड़ रुपया)। भारत को अपने सीमावर्ती देशों से व्यापार में ९.०४ करोड़ रुपया की कमी हुई। सोने चांदी के व्यापार में संतुलन १४ लाख रुपये से प्रतिकूल रहा (आयात १५ लाख रुपया निर्यात एक लाख रुपया)। कुल कमी २३२.७६ करोड़ रुपयों की हुई। व्यापार के संतुलन के कुछ वर्तमान आंकड़े इस प्रकार हैं:—

(लाख रुपयों में)

	फरवरी		११ माह अप्रैल से फरवरी	
	१९५२	१९५१	१९५१-५२	१९५०-५१
व्यापार का संतुलन (मर्चेनडाइज़)	– ३३,३१	+ १२,१०	– १,१७,६१	+ ७,२०
व्यापार का संतुलन (प्रायवेट ट्रेजर)	– २	+ २	– १२	– ६
कुल प्रत्यक्ष व्यापार का संतुलन	– ३३,३३	+ १२,१२	– १,१८,०३	+ ७,१४

व्यापार के संतुलन की प्रतिकूलता के कारण (Causes Of Unfavourable Balance Of Trade)

द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् व्यापार का संतुलन भारत के प्रतिकूल होने लगा। कुछ समय के लिये अवश्य हमारा भाग्य चमका, किन्तु पुनः स्थित बिगड़ गई, और आज जो दशा है, उसका वर्णन हम कर ही चुके हैं। प्रतिकूलता का प्रमुख कारण है देश का बँटवारा जिसके परिणामस्वरूप भारत को अपना पेट भरने के लिये अन्य देशों की शरण लेनी पड़ी। वर्मा, जो चावल का भंडार है, बहुत दिनों पहले ही भारत से पृथक कर दिया गया था। १९४७ से तो अन्न उत्पादन के प्रमुख भाग (सिन्ध और पश्चिमी पंजाब) भी भारत से अलग करके पाकिस्तान में सम्मिलित कर दिये गये। इधर चार मिलियन प्रतिवर्ष के

हिसाब से देश की जनसंख्या बढ़ रही है। अतः अन्न की स्थित स्पष्ट है। अस्तु भारत को विश्व के कोने २ से अनाज मँगाना पड़ा और आज भी उसका आयात जारी है। अनाज का आयात मुख्यतः दुर्लभ मुद्रा प्रदेशों (Hard Currency Areas) से हुआ जिनके साथ व्यापार का संतुलन पहले से ही विपक्ष में था, अतः स्थित और भी बिगड़ गई। अन्न के ऊँचे मूल्य तथा भारत-पाक राजनैतिक मतभेद ने जले पर नमक छिड़कने का कार्य किया। भारत-पाकिस्तान के मध्य जून १६४८ तक यथास्थिति समझौता (Standstill Agreement) रहा और उस समय तक पौंड पावने (Sterling Balances) का जो भाग मुक्त हुआ, उसे हम उपभोग नहीं कर सके, किन्तु तत्पश्चात् एक वर्ष में ही हमने न केवल उस भाग को, वरन् शेष पावने का भी काफी भाग समाप्त कर डाला। इसका प्रमुख कारण यह था कि जूट, कपास, चमड़ा तथा खाल का निर्यात बहुत कम हो गया। कच्चा जूट तथा कपास हमें पाकिस्तान, सुडान तथा मिश्र देश से मंगाने पड़े, जिससे कि हमारे यहाँ के कारखाने उनके द्वारा निर्मित माल तैयार कर सकें।

सितम्बर १६४६ में रुपये का अवमूल्यन (Devaluation) हुआ। तब से पाकिस्तान के साथ तो हमारा व्यापार बन्द सा ही हो गया। भारतीय वस्तुओं पर पाकिस्तान ने नाना प्रकार के कर लगाने शुरू किये और एक तरह से हमारी वस्तुओं का बहिष्कार कर दिया। यही नहीं, हमारी खरीदी हुई जूट को भी उसने भारत आने से रोक दिया। व्यापार के संतुलन की प्रतिकूलता को बढ़ाने में एक और कारण सहायक हुआ। पाकिस्तान ने अपने रुपये का अवमूल्यन नहीं किया; अतः वहां की वस्तुओं के लिये भारत को ऊँचे दाम देने पड़े। इसलिये पाकिस्तान माल भेजने में भारत को विशेष लाभ नहीं होता।

निर्यात कम करने की दृष्टि से भारत ने अनेक निर्यात कर तथा प्रतिबन्ध लगा दिये। इन कारणों से पाकिस्तान को निर्यात में भारी कमी हो गई और व्यापार का संतुलन हमारे विरुद्ध हो गया।

व्यापार के संतुलन की प्रतिकूलता का एक कारण निर्यात की मात्रा में कमी है। ऐसी अनेक चीजें हैं (जैसे तेल के बीज, लोहा, कच्ची कपास आदि) जिनकी कि देश के भीतर ही खपत काफी बढ़ गई है, अतः अब उनका निर्यात भी कम हो गया है।

भारत में मुद्रा का आवश्यकता से अधिक प्रसार हो गया है, अतः यहाँ उत्पादन व्यय (Costs Of Production) अधिक है और हमारे देश की निर्मित वस्तुयें विदेश में महँगी पड़ती हैं। इसका देश के निर्यात पर विशेष प्रभाव पड़ा। हमारे निर्यात कम हो गये। यदि उत्पादन व्यय कम होते तो सम्भव था कि वस्तुओं का मूल्य कम होता और निर्यात भी अधिक होते।

दशा सुधारने के लिये सरकारी प्रयत्न

(Government Measures For Improving The Situation)

व्यापार की गिरती हुई दशा को सुधारने के लिये भारत सरकार ने निम्नलिखित प्रयत्न किये:—

(अ) निर्यात में वृद्धि (Increase In Exports)

निर्यात बढ़ाने की दृष्टि से भारत सरकार ने जुलाई १९४९ में गोरवाला निर्यात समिति नियुक्त की। समिति के सुझावों को स्वीकार करते हुये सरकार ने नवम्बर १९४९ में निम्न कदम उठाये:—

(i) जूट की वस्तुओं में सट्टा बिल्कुल समाप्त कर दिया

गया और अन्य दिशाओं में भी उसको समाप्त करने के प्रयत्न किये गये।

(ii) निर्यात नीति ढीली कर दी गई तथा लाइसेन्सिंग पद्धति को सरल बनाया गया।

(iii) निर्यात की जाने वाली वस्तुओं के निर्माण में सुविधायें देने के प्रयत्न किये, जैसे उद्योगों को कच्चा माल कन्ट्रोल रेट पर दिया गया, उन्हें पैकिंग तथा यातायात की सुविधा प्रधान की गई, आदि।

(iv) भारतीय वस्तुओं की किस्म (Quality) को उन्नत करने का प्रयत्न किया गया, जिससे विदेश में उन्हें स्वीकार किया जा सके।

(v) निर्यात की वस्तुओं को प्रान्तीय बिक्री कर से मुक्त कर दिया, और कुछ निर्यात कर भी कम कर दिये गये।

इसके अतिरिक्त निर्यात नीति के नियन्त्रण के हेतु सरकार ने एक परामर्शदात्री समिति की भी नियुक्ति की। इसका वर्णन हम पहले कर चुके हैं।

(आ) आयात पर नियन्त्रण (Control over Imports):-

डालर की कमी के पूरा करने की दृष्टि से डालर क्षेत्रों से आयात पर नियन्त्रण लगा दिया गया। स्टर्लिङ्ग प्रदेशों से जो माल मँगाया जाता था, उस पर भी नियन्त्रण किया गया। आयात व्यापार पर उचित नियन्त्रण के हेतु सरकार ने आयात परामर्शदाता समिति की भी नियुक्त की इसका भी वर्णन पीछे दिया जा चुका है।

(इ) उत्पादन में वृद्धि (Increase in Production):—

व्यापार के सन्तुलन को अपने पक्ष में करने के लिये निर्यात

बढ़ाना अति आवश्यक होता है, और निर्यात को बढ़ाने के लिये अधिक उत्पादन बड़ा आवश्यक है। इस दिशा में भी भारत की सरकार ने भरसक प्रयत्न किया और कर रही है। अन्न तथा कच्चे माल के अधिक उत्पादन के लिये पूरी कोशिश हो रही है। अनेक बहुप्रयोजन योजनायें (Multi-purpose Projects) कार्यान्वित की जा रही है। आशा है कि उनके पूर्ण होते ही दशा काफी सुधर जायगी। इनके अतिरिक्त चाय, मैंगनीज, छोटे रेशे वाली कपास, जूट, लाख, अबरक, आदि का निर्यात बढ़ाने के लिये भी भारत की सरकार पूर्ण प्रयत्न कर रही है।

(ई) रुपये का अवमूल्यन (Devaluation of the India Rupee):—

भारत की स्थिति को ध्यान में रखते हुए सितम्बर १९४९ में भारत ने भी अपने रुपये का अवमूल्यन कर दिया और निर्यात बढ़ाने का पूर्ण प्रयत्न किया। व्यापार का सन्तुलन अनुकूल भी होने लगा, जैसा कि इन आँकड़ों से स्पष्ट हैं :—

(करोड़ रुपयों में)

	आयात	निर्यात	संतुलन	
१९४९ जुलाई	५७	२९	– २८	
अगस्त	५१	३४	– १७	
सितम्बर	३९	३४	– ५	अवमूल्यन
अक्टूबर	५९	३५	– २४	
नवम्बर	४३	५२	+ ९	
दिसम्बर	३६	५१	+ १५	
१९५० जनवरी	२७	४७	+ १०	
फरवरी	२९	४५	+ १६	
मार्च	३३	४५	+ १२	

फलस्वरूप १९५०-५१ में स्थित कुछ सुधरी किन्तु निर्यात फिर कम होने लगने के कारण भारतीय व्यापार की दशा पुनः बिगड़ने लगी है।

(उ) व्यापार का राष्ट्रीय-करण (Nationalisation of Trade):—

आजकल राष्ट्रीयकरण का बोलबाला है। प्रायः प्रत्येक क्षेत्र में सरकारी हस्तक्षेप देखने में आता है। भारत सरकार ने व्यापार की दशा को सुधारने की दृष्टि से व्यापार में भी हस्तक्षेप किये। भारतीय वस्तुओं की किस्म (Quality) को सुन्दर करने के लिये उसने ग्रेडिङ्ग तथा मारकिङ्ग करवाया और इसी दृष्टि से देशमुख कमेटी (Deshmukh Committee) नियुक्त की। इस कमेटी ने जुलाई १९५० में अपनी रिपोट दे दी। इसके प्रमुख सुझाव ये हैं :—

(१) २ करोड़ से १० करोड़ रुपये तक का एक अर्ध सरकारी कारपोरेशन होना चाहिये।

(२) यह कारपोरेशन भारत के विदेशी व्यापार पर (विशेष कर अन्न, कोयला, स्टील, कपास, कुटीर-उद्योग पदार्थों के सम्बन्ध में) पूर्ण नियन्त्रण रक्खे।

(३) भारतीय शिपिङ्ग, अधिकोषण तथा आगोप का भी प्रगतिशील राष्ट्रीयकरण हो।

(४) बहुमुखी समितियाँ खोली जायें।

यहाँ यह कहना अनावश्यक न होगा कि भारत की वर्तमान स्थिति को देखते हुये व्यापार का पूर्ण राष्ट्रीयकरण सम्भव नहीं। सरकार को केवल उन्हीं क्षेत्रों में हस्तक्षेप करना चाहिये, जिनमें कि उसकी सामर्थ्य है और वह भी उसी दशा में जब कि अन्य किसी ओर से सफलता सम्भव न हो।

निर्यात बढ़ाने के अन्य साधन (Other Means to Accelerate Exports):—

(१) निर्यात की वस्तुओं का प्रमापीकरण हो । इस हेतु विशिष्ट वस्तुओं के लिये मुख्य बन्दरगाहों पर प्रादेशिक निर्यात प्रोत्साहन मण्डल (Zonal Export Promotion Groups) होना चाहिये, जो इस सम्बन्ध में सावधानी रक्खें ।

(२) निर्यात को बढ़ाने के लिये यह आवश्यक है कि लाइ-सेन्स देने में किंचित मात्र भी देर न की जाय ।

(३) अन्य उन्नतिशील देशों की भाँति भारत सरकार भी भारतीय व्यापारियों को विदेशों से व्यापार करने में आवश्यक सुविधायें प्रदान करे तथा विदेशों में शाखायें खोलने के लिये उन्हें प्रोत्साहन दे ।

(४) वाणिज्य मन्त्रालय में पृथक रूप से एक एक्सपोर्ट प्रमोशन डाइरेक्ट्रेट हो जो केवल विदेशी व्यापार की प्रवृति (Trend of Foreign Trade) पर ही पूर्ण ध्यान रक्खे और व्यापार को बढ़ाने के लिये सुझाव दे ।

(५) आन्तरिक व्यापार सम्बन्धी आँकड़े भली प्रकार प्रका-शित कराये जायें ।

(६) अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शिनियों तथा मेलों में खूब भाग लेना चाहिये । भारतवर्ष में भी व्यापारिक मेलों की व्यवस्था की जावे जिससे व्यापारिक ज्ञान की वृद्धि हो और व्यापार को प्रोत्साहन मिले ।

(७) यू० के० तथा यू० एस० ए० की भाँति भारत में भी निर्यात सम्बन्धी साख के लिये प्रत्याभूति देने की पद्धति (Export Credit Gurantee System) प्रचलित की जावे

जिससे कि व्यापारियों को खूब प्रोत्साहन मिले और वे निसङ्कोच होकर विदेशी व्यापार में भाग ले सकें।

(८) ब्रिटेन के 'निर्यात व्यापार विषयक अनुसन्धान के सङ्गठन' (British Export Trade Research Organisation) की भाँति एक अनुसन्धान संस्था भारत में हो, जो हमारे विदेशी व्यापार के सम्बन्ध में अनुसन्धान करे। इससे व्यापार की प्रगति होगी।

(९) विदेशी व्यापार की उन्नति के लिये भारतीय विनिमय अधिकोष (Indian Exchange Banks) हों।

(१०) यातायात के साधनों (विशेषकर शिपिंग) की उन्नति हो।

(११) विदेशी यात्रियों को प्रोत्साहन देना चाहिये जिससे हमें विदेशी मुद्रा प्राप्त हो सके।

नवां परिच्छेद

प्रशुल्क नीति

(Fiscal Policy)

किसी भी देश के व्यापार का वहां की प्रशुल्क नीति से बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध होता है और सच तो यह है कि व्यापार की उन्नति अप्रत्यक्ष रूप से प्रशुल्क नीति पर ही निर्भर होती है। व्यापार का विकास देश के उद्योग धन्धों की वृद्धि पर अवलम्बित है, और ये उद्योग धन्धे उसी दशा में पनपते हैं जब कि प्रशुल्क नीति अनुकूल हो और उद्योगों को उससे संरक्षण (Protection) मिलता हो। इस अध्याय में हम संरक्षण की लाभ एवं हानि तथा भारत की प्रशुल्क नीति पर प्रकाश डालेंगे।

व्यापार व उद्योग के लिये संरक्षण के लाभः—

(Merits Of Protection For Trade & Industries)

संरक्षण से निम्नलिखित लाभ हैं:—

(१) शिशु उद्योगों (Infant Industries) के लिये संरक्षण की विशेष आवश्यकता है। जिस प्रकार एक छोटे बालक के पालन पोषण के लिये प्रारम्भ में धाय (Nurse) चाहिये जो उसे छोटी मोटी बातें सिखाकर व्यवहार कुशल बना दे उसी प्रकार शिशु उद्योगों के विकास के लिये भी संरक्षण रूपी धाय आवश्यक है जो उन्हें (उद्योगों को) अपने पैरों पर खड़ा होना सिखा दे जिससे कि वे प्रतिद्वन्द्वता के युद्ध (Competition) में पिछड़ न जायें। इस सम्बन्ध में लाला हरेकृष्ण लाल के ये शब्द बड़े मार्के के हैं:—

"शिशु का पालन पोषण करो, बच्चों की रक्षा करो और तरुण को स्वतंत्र छोड़ दो।"* यह कथन उद्योगों के सम्बन्ध में भी पूर्ण रूप से चरितार्थ होता है।

(२) विश्व की वर्तमान स्थिति को देखते हुये यह कहना गलत न होगा कि कोई भी देश केवल एक ही दिशा में विकास करके सफल नहीं हो सकता। आज कोई देश यह नहीं चाहता कि उसके यहां सभी लोग कृषक, दुकानदार या क्लर्क ही हों। कुछ उद्योगों का विकास भी वांछनीय है; अतः औद्योगीकरण की आज एक लहर सी दिखाई पड़ती है। किन्तु इसकी सफलता अथवा उद्योगों के उचित तथा युक्तिपूर्ण विकास के हेतु संरक्षण की आवश्यकता है।

(३) प्रतिरक्षा उद्योगों (Defence Industries) का विकास तो प्रत्येक देश के हित में है। युद्धकाल में ऐसे उद्योगों का महत्व और भी बढ़ जाता है। अतएव इन उद्योगों की उन्नति के लिये तो संरक्षण होना ही चाहिये।

(४) आर्थिक दृष्टिकोण से कोई भी देश उसी दशा में आत्म निर्भर (Self-Sufficient) हो सकता है जब कि उसमें विभिन्न प्रकार के उद्योगों का विकास हो और उद्योगों की उन्नति के लिये रक्षण करों (Protective Duties) की बड़ी आवश्यकता होती है। संरक्षण के आधार पर ही उद्योग तेजी के साथ प्रगति कर सकते हैं, तथा उनके बल पर ही विदेशी उद्योगों का सामना करने में समर्थ हो सकते हैं।

(५) आधार उद्योगों (Basic & Key Industries) का

---

* "Nurse the baby, protect the child and free the adult,' said Lala Harekrishan Lal while, speaking about the Indian Industries to the Fiscal Commission.

विकास प्रत्येक देश में होना ही चाहिये, क्योंकि उन पर ही अन्य उद्योगों का विकास अवलम्बित होता है। ऐसे आधार उद्योगों के उदाहरण ये हैं:-स्थूल रासायनिक उद्योग (Heavy Chemicals), बिजली के सामान वाले उद्योग (Industries relating to electrical apparatus), मशीनरी तथा इंजन वाले उद्योग आदि। अतएव इन उद्योगों की उन्नति के लिये संरक्षण की शरण लेनी पड़ेगी।

(६) कुछ देश अपने व्यापार के विकास की दृष्टि से दूसरे देशों में अपने उत्पादन मूल्य से भी कम मूल्य पर माल बेचते हैं। ऐसा करने में उनका उद्देश्य वहाँ के बाजार को अपने अधिकार में करना होता है और जब बाज़ार पर वे अपना अधिकार जमा लेते हैं, तब फिर वस्तुओं के मनमाने दाम बढ़ा कर खूब लाभ उठाते हैं। इसे वस्तु राशि-पातन (Dumping) कहते हैं। इसको रोकने के लिये देशी उद्योगों को संरक्षण देना अति आवश्यक है।

(७) कुछ देश अपने व्यापार के विकास के लिये उद्योगों को आर्थिक सहायता देते हैं, जिससे कि उनकी वस्तुयें विदेशों में सस्ती बिकें। ऐसे देशों से प्रतिद्वन्द्वता में सफलता पाने के लिये भी देशी उद्योगों को संरक्षण देना आवश्यक होता है।

(८) जिन देशों ने अपने यहाँ की मुद्रा का मूल्य घटा दिया हो उनके विरुद्ध भी उद्योगों का संरक्षण एक मात्र औषधि होती है। उदाहरण के लिये जब जापान ने अपनी मुद्रा येन (Yen) का मूल्य घटाया था तो भारत के सूती कपास के उद्योगों पर उसका बहुत प्रभाव पड़ा। अतः विवश होकर हमको रक्षात्मक कर लगाने पड़े थे।

(६) राज्य के कोष में आय की राशि को बढ़ाने के लिये भी संरक्षण एक सुन्दर विधि है।

(१०) संरक्षण का एक अनोखा लाभ यह है कि इसके द्वारा बेकारी की समस्या भी दूर होती है। संरक्षण से उद्योग-धन्धों का विकास होता है, और उद्योग-धन्धों के विकास से मनुष्यों को रोज़ी मिलती है।

(११) भारत के लिये संरक्षण विशेष हितकारी है क्यों कि यहां एक ऐसी जन-भावना है कि संरक्षण में ही उद्योगों के विकास की संजीवनी है। ऐसी आम भावना का लाभ उठाकर संरक्षण के द्वारा बड़ी सरलता से औद्योगिक विकास किया जा सकता है।

संरक्षण से हानियाँ:—

(Demerits & Dangers Of Protection)

यद्यपि संरक्षण से इतने लाभ हैं फिर भी वह त्याग एवं आपत्तियों से खाली नहीं है। इसके निम्नलिखित दोष हैं:—

(१) संरक्षण का प्रथम दोष यह है कि रक्षण करों के द्वारा रक्षित वस्तुओं के दाम बढ़ जाते हैं। उन बढ़े हुये दामों का भार अन्त में उपभोक्ताओं [विशेषकर मध्यम वर्ग] पर ही पड़ता है।

(२) रक्षण करों का भार मध्यम श्रेणी के लोग उठाते हैं, किन्तु उनके द्वारा जो लाभ उद्योग को होता है, उसे केवल उद्योगपति एवं व्यापारीगण ही भोगते हैं। उपभोक्ताओं को तो उसका स्वाद भी नहीं मिल पाता।

(३) यदि देश के कुछ उद्योगों को संरक्षण मिल जावे किन्तु कुछ उससे वंचित रह जावें, तो वे उद्योग जो संरक्षण से वंचित रह गये हैं, पिछड़ जायेंगे और शीघ्र उन्नति नहीं कर सकेंगे।

उदाहरण के लिये, भारतवर्ष में काटन मिल उद्योग को तो संरक्षण मिल गया, किन्तु काटन हैन्डलूम उद्योग को नहीं दिया गया। फल यह हुआ कि हैन्डलूम उद्योग पिछड़ गया और पनपने नहीं पाया।

(४) संरक्षण की सबसे बड़ी हानि यह है कि उसके कारण उद्योग अपने पैरों खड़े होना नहीं सीखते। संरक्षण के बल पर ही वे बढ़ते हैं और सदैव यही इच्छा रखते हैं कि संरक्षण बना रहे। अतः उद्योगों का स्वतंत्र विकास कठिन हो जाता है।

(५) संरक्षण से भ्रष्टाचार बढ़ता है, क्योंकि उसे प्राप्त करने के लिये उद्योगपति प्रायः संरक्षण अधिकारियों की जेब गरम करते हैं। यह बहुत बुरा दोष है। अमेरिका में कुछ उद्योग संरक्षण पाने के लिये रिश्वत देने के हेतु अलग कोष रखते हैं।

(६) संरक्षण से संयुक्तीकरण (Combination) को प्रोत्साहन मिलता है, क्योंकि एक बार जब किसी उद्योग को संरक्षण मिल जाता है तो फिर उस उद्योग के विभिन्न निर्मातागण (Manufacturers) मिल जाते हैं और संयुक्त होकर उपभोक्ताओं से मनमाने दाम (Monopoly Prices) वसूल करते हैं।

(७) उद्योगों को संरक्षण प्रदान करने से सरकार की आय भी घटती है।

ऊपर दिये हुये लाभ हानि के विवरण के अध्ययन के पश्चात हम यह कह सकते हैं कि भारत को आज अपनी व्यापारिक प्रगति के लिये संरक्षण की विशेष आवश्यकता है। उसके शीघ्र औद्योगीकरण में संरक्षण काफी सहायक होगा, यह प्रायः सभी अर्थशास्त्रियों का मत है।

भारत में प्राशुल्किक स्वतंत्रता का प्रारम्भ

(Evolution Of Fiscal Freedom in India)

१६वीं शताब्दी के मध्य से प्रथम महायुद्ध के प्रारम्भ तक भारत सरकार की प्रशुल्क नीति व्यापार में हस्तक्षेप न करने (Non-intervention) की थी अर्थात् व्यापार व उद्योगों पर कोई प्रतिबन्ध न था। यह वास्तव में अबाध व्यापार (Free Trade) का युग था। उन दिनों भारत कदम व कदम ब्रिटिश नीति का अनुसरण करता था, और यह ब्रिटिश नीति ऐसी थी कि उससे अंग्रेजों का ही स्वार्थ सिद्ध होता था। किन्तु १६१४-१८ के महायुद्ध में यह अनुभव किया गया कि बिना भारत के उद्योगों की उन्नति हुये ब्रिटिश साम्राज्य को कोई विशेष लाभ नहीं हो सकता। अतः युद्ध स्थित से घबड़ाकर ब्रिटिश सरकार ने कुछ भारतीय उद्योगों को प्रोत्साहन देने का निश्चय कर लिया। १६१६ में एक औद्योगिक मंडल (Industrial Commission) की नियुक्ति हुई। १६१८ में इस मंडल ने अपनी रिपोर्ट में यह सिफारिश की कि भारतीय उद्योगों के विकास में भारत सरकार को मुख्य भाग लेना चाहिये। यह विकास बिना प्राशुल्किक स्वतंत्रता (Fiscal Freedom) के असम्भव था। अतः १६२१ में ब्रिटिश पार्लियामेन्ट ने प्राशुल्किक स्वतन्त्रता का प्रस्ताव (Fiscal Autonomy Convention) पास किया। इस प्रस्ताव के अनुसार भारत मन्त्री को प्रशुल्क सम्बन्धी उन मामलों में हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं रहा, जिनको कि भारत सरकार ने स्वयं अपनी विधान सभा की सम्मति से तय कर लिया हो। किन्तु ऐसी स्वतंत्रता से कोई विशेष लाभ नहीं हुआ, क्योंकि प्रायः सभी प्राशुल्किक विषयों पर भारत सरकार पहिले भारत-मन्त्री से पूछ लेती थी और तत्पश्चात् ही विधान सभा के

सम्मुख रखती थी। अतः भारत की प्रशुल्क नीति की पूर्ण जांच तथा साम्राज्य अधिमान (Imperial Preference) के प्रस्ताव पर विचार करके सिफारिश करने के लिये एक प्रशुल्क मंडल (Fiscal Commission) नियुक्त किया गया। इस मंडल ने विवेचनात्मक संरक्षण (Discriminating Protection) के पक्ष में सुझाव दिया।

विवेचनात्मक संरक्षण

(Discriminating Protection)

इस नीति के अनुसार केवल उन्हीं उद्योगों को संरक्षण मिल सकेगा जो उसके योग्य होंगे। योग्यता विषयक निम्न तीन शर्तें (Triple Conditions Or Formula) पूरा करना अनिवार्य है:—

(१) संरक्षण के इच्छुक उद्योग को प्राकृतिक सुविधायें–जैसे कच्चे माल को सुलभता, सस्ती शक्ति का होना, पर्याप्त मात्रा में श्रमिकों का मिलना; विस्तृत आन्तरिक बाजार आदि – मिली होनी चाहिये। जिस उद्योग को ये सुविधायें प्राप्त नहीं हैं, वह तो देश के लिये भार स्वरूप है, उसे संरक्षण नहीं दिया जा सकता।

(२) उद्योग ऐसी स्थिति में हो कि बिना संरक्षण के वह बिल्कुल उन्नति नहीं कर सकता, और

(३) उस उद्योग को ही संरक्षण मिल सकता है कि जो कुछ समय पश्चात् स्वयं अपने पैरों खड़ा होने की शक्ति रखता हो।

उक्त आवश्यक शर्तों के अतिरिक्त कुछ अन्य शर्तें भी हैं। उस उद्योग को ही शीघ्र संरक्षण मिलेगा (अ) जो अधिकता के साथ बड़ी मात्रा में कम व्यय पर उत्पादन कर सके, (आ) जो कुछ समय में ही देश की समस्त आवश्यकताओं को पूरा करने योग्य हो सके, (इ) जो राष्ट्रीय सुरक्षा की दृष्टि से

अनिवार्य हो, जैसे कि आधार-भूत उद्योग (Basic Or Key Industries), (ई) जिनको विदेशी उद्योग की राशि पातन कार्यवाहियों (Dumping Activities) का सामना करना पड़ता हो, (उ) जिनको उन देशों की चीजों का सामना पड़ता हो जिन्होंने कि अपनी मुद्रा का मूल्य घटा दिया है, और (ऊ) जिनको उन देशों की वस्तुओं का सामना करना पड़ता हो जिनकी सरकारों ने उद्योगों को विशेष आर्थिक सहायता दे रक्खी है।

विवेचनात्मक संरक्षण की आलोचना

(Criticism Of The Policy Of Discriminating Protection)

यद्यपि संरक्षण की विवेचनात्मक नीति से कुछ उद्योगों को विशेष लाभ हुआ तथापि उसे व्यापार एवं उद्योग के हित में नहीं कह सकते क्योंकि प्रथम तो संरक्षण की शर्तें बड़ी कड़ी हैं, विशेषकर पहली दो शर्तें। यह विचार बड़ा हास्यास्पद है कि जब उद्योग को प्राकृतिक सुविधायें प्राप्त हों, तब ही उसे संरक्षण दिया जाय। यदि प्राकृतिक सुविधायें उद्योग को सुलभ होंगी तो फिर उसे संरक्षण की आवश्यकता ही क्यों होने लगी! इसी प्रकार दूसरी शर्त भी बेढंगी है, क्योंकि जब कोई उद्योग अन्य किसी मार्ग से उन्नति नहीं कर सकता, तभी तो वह संरक्षण के लिये इच्छुक होगा। उद्योग को आन्तरिक बाजार न होने की दशा में संरक्षण से वंचित रखना भी अन्याय है, क्योंकि वास्तव में ऐसे ही उद्योग संरक्षण के प्रथम अधिकारी हैं। वे उसके बल पर उन्नति करके बाजार बना सकते हैं। संरक्षण की इस नीति का सबसे बड़ा दोष यह है कि संरक्षण प्राप्त होने में बड़ी देरी लगती है क्योंकि प्रशुल्क बोर्ड की कार्यवाही धीरे २ होती है। इस देरी से प्रायः उद्योगों को बड़ी हानि उठानी पड़ती है। अतः

श्री वी०पी०अदरकर के शब्दों में "विवेचनात्मक संरक्षण की नीति पूर्ण रूप से बदल डालनी चाहिये और उसके बदले में एक साधारण, सीधी और सुन्दर नीति हो।"

विवेचनात्मक संरक्षण की नीति से विभिन्न उद्योगों को जो लाभ हुये उनका अनुमान निम्नांकित तालिका * से भली प्रकार लगाया जा सकता है:—

विभिन्न उद्योगों की प्रगति
(१६२२-२३—१६३६-४०)

	स्टील (इनगाटम)	कॉटन (पीसगुडस)	शक्कर गन्ना	दियासलाई	कागज
	१०.० टन	मिलियन् गज	१००० टन	ग्रास (लाख)	१००० टन
१६२२-२३	१३१	१,७२५	२४	८	२४
१६३६-४०	१,०७०	४,०१३	१,२४२	२२०	७०

मन्दी के युग में इन रक्षित उद्योगों ने अरक्षित उद्योगों की अपेक्षा मन्दी का अधिक सुन्दरता से सामना किया और डटे रहे। अन्य उद्योग मन्दी का सामना न कर सके और समाप्त हो गये। जिन उद्योगों को संरक्षण मिला, उनसे सम्बन्धित अनेक सहायक उद्योग [Subsidiary Industries] भी उन्नति कर गये। इससे अनेक लोगों को काम मिला तथा बेकारी की समस्या हल हुई।

द्वितीय महायुद्ध के बाद की स्थित
(The Post War Position)

अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये युद्ध काल में

*Table compiled by Dr. John Mathahi

संरक्षण का कोई प्रश्न नहीं उठा, क्योंकि विदेशों से माल कम आता था। अतएव प्रतिस्पर्धा को कोई बात न थी। हाँ, जो उद्योग रक्षित थे, उनके लिये संरक्षण जारी रहा। युद्ध के पश्चात् देश के सम्मुख अपने आर्थिक नव निर्माण का प्रश्न था। युद्ध युग में जन्म लेने वाले उद्योगों की पूर्ण जाँच के लिये नवम्बर १९४५ में प्रशुल्क बोर्ड की स्थापना हुई। १३ वर्ष में यह बोर्ड केवल ४२ उद्योगों को जाँच कर सका। तभी देश का बँटवारा हुआ और नई २ समस्यायें पैदा हो गईं। अतः १९४७ में प्रशुल्क बोर्ड का पुनर्संगठन किया गया। इसके सभापति श्री जी०एल०मेहता थे। डाक्टर एच० एल० डे० तथा डाक्टर बी० वी० नारायनास्वामी इसके सदस्य थे। अन्य कार्यों के अतिरिक्त इस प्रशुल्क मंडल के दो विशेष कार्य थे प्रथम सरकार को उन बातों की सूचना देना कि जिनके कारण भारत-निर्मित वस्तुओं का उत्पादन व्यय विदेशों से आयात की हुई वस्तुओं की अपेक्षा अधिक होता है, और दूसरे, न्यूनतम व्यय पर देश के अन्दर उत्पादन बढ़ाने के लिये सुझाव देना। बाद में १९४८ में इस मंडल को निम्नलिखित कार्य और सौंप दिये गये:—

(i) देश में निर्मित वस्तुओं के उत्पादन व्यय की जांच करना तथा वस्तुओं के थोक और खेरीज मूल्य निश्चित करना;

(ii) राशिपातन (Dumping) के विरुद्ध भारतीय उद्योगों के संरक्षण के लिये सरकार को सुझाव देना।

(iii) विभिन्न वस्तुओं पर प्रशुल्क, विशिष्टकर, अथवा विदेशों को दी हुई सुविधाओं (Concession) के प्रभाव का अध्ययन करना।

(iv) संयुक्तीकरण (Combination), प्रन्यास (Trust) तथा एकाधिकार संस्थाओं (Monopolies) के विषय में सरकार

को सूचित करना और उनके दोषों को दूर करने के लिये सुझाव भी देना।

(९) रक्षित उद्योगों (Protected Industries) के ऊपर सदैव निगाह रखना और आवश्यकतानुसार उनके लिये समय समय पर संरक्षण तथा प्रशुल्क नीति में परिवर्तन करना।

उपभोक्ताओं के हित को ध्यान में रखते हुये इस प्रशुल्क मंडल ने अनेक पुराने व नये उद्योगों की जाँच की और उसकी सिफारिशों के परिणामस्वरूप ३४ युद्ध-जनित उद्योगों (War born industries) को संरक्षण प्रदान किया गया। निम्न-लिखित ६ पुराने उद्योगों से संरक्षण हटा लिया गया—सूती कपास का उद्योग; लोह व स्पात का उद्योग कागज, मेगनेशियम, क्लोरायड, सिलवर थ्रेड तथा वायर एवं शक्कर उद्योग। शक्कर के उद्योग को एक वर्ष के लिये संरक्षण दिया गया जो अप्रैल १९५० से वापिस ले लिया गया।

प्रशुल्क मन्डल १९४९-५० के सुझाव

[Recommendations of the Fiscal Commission, 1949-50]

१९४९-५० में एक नवीन प्रशुल्क मन्डल की नियुक्ति हुई जिसने भारत के रक्षात्मक संरक्षण की विस्तार से जाँच की एवं उसका गम्भीर अध्ययन किया। इस मन्डल ने इस बात पर विचार किया कि भारत की वर्तमान आवश्यकतायें क्या हैं तथा वर्तमान परिस्थितियों में प्रशुल्क नीति उसकी कैसी हो। एक स्थाई-प्रशुल्क मन्डल (Permanent Tariff Commission) के लिए भी उक्त मन्डल ने सिफारिश की और हर्ष का विषय है कि स्थाई प्रशुल्क मन्डल की नियुक्ति भी हो गई है। यह मण्डल एक वैधानिक संस्था (Statutory Body) है। इसमें ५ सदस्य हैं;

जिनमें से एक चेयरमैन है । विशेष मामलों के लिये यह मन्डल अन्य सलाहकार भी नियुक्त कर सकता है। इस नवीन प्रशुल्क मंडल का एक कार्य संरक्षण का वस्तुओं के मूल्य स्तर पर प्रभाव ज्ञात करना भी है। उत्पादन व्यय, उत्पादन तथा चीजों की किस्म पर संरक्षण का क्या प्रभाव पड़ा, इस बात की भी जाँच यह मंडल करेगा। भविष्य में संरक्षण के हेतु इस प्रशुल्क मंडल ने भारतीय विधान के आधार पर कुछ सिद्धान्त बना दिये हैं। उन सिद्धान्तों के अनुसार प्रशुल्क मंडल ने निम्नलिखित सिफारिशें की हैं:—

(१) राष्ट्रीय हित में प्रतिरक्षा तथा अन्य प्रमुख उद्योगों (Defence & Strategic Industries) को संरक्षण अवश्य मिलना चाहिये।

(२) आधार उद्योग (Basic Or Key Industries) को भी संरक्षण दिया जावे।

(३) अन्य उद्योगों के संरक्षण में इस बात का ध्यान रखा जावे कि उनके लिये प्राकृतिक साधन सम्बन्धी सुविधायें कितनी तथा कैसी हैं, उत्पादन का व्यय कितना होगा तथा कितनी अवधि के पश्चात् वे बिना संरक्षण के भी अपने पैरों खड़े होने योग्य बन सकते हैं।

(४) उन उद्योगों को जो किसी रक्षित उद्योग की वस्तुओं का प्रयोग करते हों, हानिपूरक संरक्षण (Compensatory Protection) दिया जा सकता है।

(५) राष्ट्र के हित में कृषि उद्योगों को भी संरक्षण अवश्य प्रदान करना चाहिये।

(६) प्रशुल्क मंडल को इस बात का विश्वास दिलाया

जाना चाहिये कि रक्षित उद्योग संरक्षण से कोई अनुचित लाभ नहीं उठायेगा।

प्रशुल्क मंडल ने यह भी सिफारिश की कि एक प्रथक विकास कोष (Development Fund) हो, जिसमें प्रशुल्क करों (Tariff Duties) का एक निश्चित भाग प्रतिवर्ष डालना चाहिये इस कोष राशि में से निम्नलिखित परिस्थितियों में उद्योगों को उचित आर्थिक सहायता दी जावे:—

(अ) जब कि देश के अन्दर का उत्पादन देश की मांग को केवल कुछ अंश ही में पूरा करता हो;

(आ) जब कि उद्योग की वस्तुयें प्रमुख कच्चे माल की हों; और

(इ) जब कि उद्योग की अनेक विशिष्ट श्रेणी हों कि दूसरे से अलग नहीं की जा सकती, और केवल उन्हीं के लिये संरक्षण की आवश्यकता हो।

उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा के हेतु मंडल ने यह भी अनिवार्य कर दिया है कि रक्षित उद्योग के उत्पादन की मात्रा तथा उसकी वस्तुओं की किस्म को पूर्ण जाँच होनी चाहिये। रक्षित उद्योग कोई ऐसा कार्य नहीं कर सकते जो कि समाज के हित में बाधक हो।

प्रशुल्क नीति के इस त इतिहास से यह स्पष्ट है कि ब्रिटिश सरकार ने भारत के हितों की नेक मात्र भी चिन्ता न की। वे करने भी क्यों लगे। जो भी संरक्षण भारतीय उद्योगों को प्रदान किया गया, वह राजनैतिक परिस्थितियों से विवश होकर के ही उन्होंने किया। उन्होंने अपने स्वार्थ को सदैव प्रथम स्थान दिया। साम्राज्य अधिमान की नीति भी अपने स्वार्थ को पूर्ति के लिये ही उन्होंने बनाई और इससे उन्हीं को विशेष लाभ हुये। किन्तु अब सरकार हमारी है। वर्तमान जनप्रिय सरकार

ने राष्ट्र के हित में अब एक स्थाइ प्रशुल्क मंडल नियुक्त कर दिया है और उसके कार्यों से यह प्रगट होता है कि भारत की प्रशुल्क नीति देश हित में बरती जायगी अतः अब हमारे उद्योग दिन दूनी व रात चौगनी उन्नति कर सकेंगे। भारत ने अब अन्य देशों से द्विपक्षीय व्यापारिक समझौते (Bilateral Trade Agreements) करने शुरू भी कर दिये हैं। इस प्रकार उन्नति की ओर हमारा कदम बढ़ गया है। हमें पूर्ण आशा है कि सफलता के अभीष्ट स्थान पर भी हम शीघ्र पहुंच सकेंगे।

परिशिष्ट--अ

कुछ विविध विचार

(A few Miscellaneous Reflections)

भारत व अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार संघ

(India & International Trade Organisation)

द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् विश्व शान्ति के लिये राजनैतिक तथा आर्थिक आधार पर अनेक अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं का जन्म हुआ। राजनैतिक क्षेत्र में संयुक्त राष्ट्र संघ (U. N. O.—United Nations Organisation) की स्थापना हुई और आर्थिक क्षेत्र में तो अनेक सस्थायें बनीं जिनमें प्रमुख ये हैं—अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (I. M. F.—International Monetary Fund); विश्व बैंक (World Bank); अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक संघ (International Labour Organisation) तथा अन्तर्राष्ट्रीय खाद्य संघ (I. F. O.—International Food Organisation) आदि। इसी प्रकार व्यापारिक क्षेत्र में शान्ति रखने के उद्देश्य से सर्व प्रथम १९४७ में जनेवा में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार संघ (International Trade Organisation) स्थापित करने की चर्चा चली। फिर मार्च १९४८ में हवाना (कूबा) में उस संघ की द्वितीय बैठक हुई। इसमें ५८ राष्ट्रों ने भाग लिया। उन ५८ राष्ट्रों में से केवल ५३ ने ही संघ के चार्टर पर वास्तव में हस्ताक्षर किये। इनमें भारत भी था। फरवरी १९५१ में अमेरिका ने हवाना चार्टर को स्वीकार न करने इका विचार प्रगट किया। स पर ब्रिटिश सरकार ने भी पाँव

उखाड़ने शुरू किये और ऐसी घोषणा की कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार संघ का भविष्य अन्धकारमय है। कुछ भी हो वह अपने ढङ्ग की एक निराली संस्था है। उसने जो कार्य किया वह प्रशंसनीय है। ५० से भी अधिक विभिन्न राष्ट्रों को मिलाकर पारस्परिक सहयोग स्थापित कर देना कोई मामूली बात नहीं है। सच तो यह है कि इसके द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में आने वाली रुकावटें दूर हो गई हैं और प्रायः सभी राष्ट्र इसके महत्व का अनुभव करने लगे हैं।

हवाना चार्टर का उद्देश्य एवं उसकी प्रमुख बातें

(Object of the Havana Charter & Its Main Contents) :—

हवाना चार्टर का प्रधान उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ाकर पिछड़े तथा अविकसित देशों की आर्थिक उन्नति करना है। इस चार्टर की मुख्य चार बातें हैं :—

(१) यदि कोई देश किसी अन्य देश को कोई रियायत (आयात-निर्यात कर सम्बन्धी अथवा अन्य किसी प्रतिबन्ध के विषय में) देगा तो वह रियायत शेष सम्पूर्ण देशों को स्वयं मिल जायेगी। इस व्यवहार को परमानुगृहीत राष्ट्र का व्यवहार (Most Favoured Nation's Treatment) कहते हैं। इसके कुछ अपवाद (Exceptions) भी हैं। किसी पिछड़े हुये अथवा अविकसित देश को उसके आर्थिक विकास के हेतु दी गई रियायतें अन्य देशों को न मिलेंगी।

(२) अन्तर्राष्ट्रीय संघ के सदस्य पारस्परिक समझौतों के द्वारा आयात-निर्यात करों तथा अन्य व्यापारिक प्रतिबन्धों को कम से कम करेंगे। इसमें भी पिछड़े हुये देशों के आर्थिक विकास से सम्बन्ध रखता हुआ एक अपवाद है।

(३) आयात-निर्यात सम्बन्धी प्रतिबन्ध लगाने तथा प्रवेश निषेध करने की भी मनाही की गई है। अपवाद इसमें भी हैं।

(४) जिन देशों में विदेशी व्यापार राज्य द्वारा संचालित होता है, उनके साथ कोई विशेष रियायत नहीं होगी।

सदस्य देश के आर्थिक विकास एवं पुनर्निर्माण के कार्य में उक्त संघ भरसक प्रयत्न करेगा और दूसरी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के साथ इस काम में पूरा सहयोग देगा। प्रतिवर्ष इस संघ का एक सम्मेलन (Conference) हुआ करेगा। यदि इस संस्था के सदस्य अपने अपने निजी स्वार्थ को त्याग कर ईमानदारी तथा न्याय से कार्य करें तो यह आशा है कि भविष्य में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार खूब बढ़ेगा और विश्व में शान्ति रहेगी।

प्रशुल्क एवं व्यापार सम्बन्धी सामान्य समझौता (General Agreement on Tariffs and Trade—G. A. T. T.)—

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार संघ के चार्टर की द्वितीय धारा के उद्देश्य (कि सदस्य गण आयात-निर्यात करों तथा व्यापारिक प्रतिबन्धों को न्यूनतम करेंगे) को सन्मुख रख कर विभिन्न सदस्य देशों ने १९४७ में ही एक कान्फ्रेन्स की, और उसके जो निर्णय हुये उनका समावेश जी० ए० टी० टी० में कर लिया गया। यह समझौता १ जनवरी १९४८ से व्यवहार में लाया गया। प्रिपेरेटरी कमेटी (Preparatory Committee) के १८ सदस्यों के अतिरिक्त पाकिस्तान, वर्मा, लङ्का, सीरिया और दक्षिणी रोडेशिया ने भी इसमें भाग लिया। उन देशों के बीच १२३ द्विपक्षीय समझौते (Bilateral Agreement) हुये। १९४९ में दूसरी कान्फ्रेन्स एनेकी (फ्रान्स) में हुई जिसमें निम्नलिखित नये देशों ने भी भाग लिया—डेन्मार्क, यूनान, फिनलैंड, स्वीडन, इटली, हैटी, डोमोनियन रिपब्लिक. लाइ-

बेरिया, निकारागुआ और उरूगुये। इन नये सदस्यों को समझौते में सम्मिलित करने के लिये एक 'प्रोटोकोल' (Protocol) पर हस्ताक्षर किये गये और २० मई, १९५० से यह लागू किया गया। भारत ने इन दोनों सम्मेलनों में भाग लेकर विभिन्न देशों से व्यापारिक समझौते किये और उनके अनुसार रियायतें दीं और प्राप्त कीं।

तत्पश्चात् अप्रैल १९५१ में टारके (England) में तृतीय सम्मेलन हुआ। इसमें ३८ देशों ने भाग लिया था और १४७ समझौते हुये। भारत ने भी इस सम्मेलन में भाग लिया। पुराने देशों के अतिरिक्त छः नये देश भी इस सम्मेलन में सम्मिलित हुये, पुराने समझौते (जनैवा तथा एनेकी) की अवधि बढ़ाकर १९५३ तक कर दी गई। कुछ पुरानी रियायतें वापस कर ली गईं तथा कुछ नवीन रियायतों के विषय में समझौते हुये।

जी० ए० टी० टी० के अन्तर्गत भारत को जो प्रशुल्क सम्बन्धी रियायतें मिली हैं उनकी भारत के प्रशुल्क मण्डल (Tariff Commission) ने पूर्ण रूप से जाँच करली है। इस मण्डल के मतानुसार यह निश्चय रूप से नहीं कहा जा सकता कि उन रियायतों का भारत के व्यापार पर क्या प्रभाव पड़ेगा। मण्डल ने इतना अवश्य निश्चय के साथ कह दिया है कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक संघ (I T. O) का भविष्य जब तक कि स्पष्ट ज्ञात न हो जाय, भारत को जी० ए० टी० टी० के विरुद्ध नहीं जाना चाहिये। प्रशुल्क मण्डल ने यह भी कहा कि प्रत्येक व्यवहार में भारत निम्नलिखित सिद्धान्तों का ध्यान रक्खे:—

(अ) नीचे लिखी हुई चीजों पर रियायत पाने की चेष्टा करनी चाहिये :—

(i) कच्चे माल की अपेक्षा निर्मित माल पर;

(ii) उन चीजों पर जो कि विश्व की वैसी ही वस्तुओं से से प्रति द्वन्द्वता करें;

(iii) उन चीजों के सम्बन्ध में जो विश्व में उनकी स्थानापन्न वस्तुओं से (Substitutes) से प्रतिद्वन्द्वता करें।

आ—नीचे लिखी हुई चीजों पर ही रियायतें देनी चाहिये :—

(i) उत्पादक माल (Capital Goods)

(ii) अन्य मशीनरी तथा इक्यूपमेन्ट (Other Machinery & Equipment)

(iii) प्रमुख कच्चा माल

प्रशुल्क मंडल ने निम्नलिखित तीन सुझाव और दिये:—

(१) व्यापारिक समझौते करते समय भारत को इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि कुटीर तथा छोटी मात्रा के उद्योगों की उन्नति परमावश्यक है। अतएव उनके विषय में अधिक से अधिक रियायतें पाने का प्रयत्न करना चाहिये।

(२) जिन वस्तुओं के सम्बन्ध में व्यापारिक समझौता (जी० ए० टी० टी० के अन्तर्गत) हुआ था, उनके आयात अथवा निर्यात पर विशेष निगाह रखनी चाहिये, और प्रति ६ माह पश्चात् उनसे सम्बन्धित आँकड़े भी छपाने चाहिये।

(३) कोई भी व्यापारिक समझौता करने के पूर्व (चाहे रियायत मिलनी हो अथवा देनी हो) व्यापार एवं उद्योग के विभिन्न प्रतिनिधियों की सलाह अवश्य ले लेनी चाहिये।

गत तीन वर्षों में भारत ने जितने व्यापारिक समझौते किये हैं, उनसे स्पष्ट है कि द्विपक्षीय व्यापारिक समझौते (Bilateral Agreements) भारत की व्यापारिक नीति के एक महत्वपूर्ण अंग हैं। हमें पूर्ण विश्वास है कि यदि इन समझौतों के अनुसार आयात निर्यात हुआ, तो भारत का भविष्य जगमगा उठेगा।

साम्राज्य अधिमानः—

(Imperial Preference)

श्रीयुत बाल्डविन (Baldwin) के शब्दों में साम्राज्य अधिमान से तात्पर्य "ब्रिटिश साम्राज्य के विभिन्न सदस्य देशों के बीच प्राशुल्किक प्रतिबन्धों को हटाकर अथवा कम करके साम्राज्य के व्यापार को बढ़ाने से है।" अंग्रेजों के शासन काल में यह अधिमान प्रचलित था, किन्तु अब स्वतंत्र भारत की नीति के अनुसार वह कम हो रहा है। १७ जून १९५२ को वाणिज्य तथा उद्योग मंत्री श्री टी० टी० कृष्णमाचार्य ने वायस आव पीपुल (Voice of People) में कहा कि भारत की सरकार ने ब्रिटेन तथा कामनवेल्थ के देशों के साथ साम्राज्य अधिमान को धीरे धीरे कम कर दिया है और जब नया समझौता हो जायगा तब अधिमान का कोई प्रश्न ही न रहेगा। श्री कृष्णमाचार्य ने यह स्पष्ट कह दिया है कि जी० ए० टी० टी० के अन्तर्गत हम किसी के भी साथ विशेष रियायत (Preference) नहीं कर सकते।

भारत का व्यापार एवं पंचवर्षीय योजनाः—

(India's Trade and the Five Year Plan)

बड़े आश्चर्य का विषय है कि "पंचवर्षीय योजना" की रूपरेखा (Draft Outline Of The Five Year Plan) में योजना समिति (Planning Committee) ने यह स्पष्टतया नहीं बतलाया कि भारत की व्यापारिक नीति क्या हो, उसकी प्रशुल्क नीति कैसी हो तथा अगले पांच वर्षों के लिये हमारा विदेशी विनिमय का बजट (Foreign Exchange Budget) क्या है—इन बातों पर योजना समिति ने किंचितमात्र भी प्रकाश नहीं डाला। आयात निर्यात की नीति के सम्बन्ध में भी "रूपरेखा" शान्त ही है। अतएव आशा है कि जब भारत की

पंचवर्षीय योजना* पर विस्तार से विचार होगा तो इन अभावों को दूर कर दिया जावेगा।

हमारे विदेशी व्यापार की भावी दिशा के विषय में अल्पकालिक और दीर्घकालिक दोनों आधारों पर विचार होना चाहिये। भारत की अल्पकालिक विदेशी व्यापार सम्बन्धी नीति ऐसी हो कि जिससे हमारे व्यापार का संतुलन देश के पक्ष में हो सके, मुद्रा स्फीत (Inflation) का प्रभाव कम हो और लोगों के रहन सहन का स्तर ऊँचा हो। इसके लिये देश में वस्तुओं के मूल्य घटाने होंगे, मुद्रा का अवमूल्य करना होगा, उत्पादन का स्वरूप बदलना होगा और द्विपक्षीय व्यापारिक समझौते करने होंगे। हर्ष है कि भारत अब इस दिशा में प्रयत्नशील भी है।

हमारी दीर्घकालीन विदेशी व्यापार सम्बन्धी नीति ऐसी हो कि अपने आर्थिक विकास के लिये हम विदेश से आवश्यक माल मंगा सकें-तथा अनुकूल बाजारों में अपना माल बेच सकें। इस सम्बन्ध में यह ध्यान रहे कि हमें बाहर से उत्पादक माल (Capital Goods) तथा अन्य मशीनरी एवं इक्वीपमेन्ट का आयात करना होगा। अतः हमारा आयात बढ़ेगा और कच्चे माल का निर्यात घटेगा। आर्थिक विकास की द्वितीय अवस्था में जब देश के भीतर औद्योगिक उत्पादन बढ़ेगा, तो उत्पादक माल का आयात कम हो जायगा। फिर अन्तिम अवस्था में उपभोग की वस्तुओं का का उत्पादन भी बढ़ेगा और उनका आयात भी कम हो जायगा। केवल कीमती चीजों का ही आयात शेष रहेगा। उत्पादन की वृद्धि के साथ साथ हमारे निर्यात भी बढ़ेंगे और फलस्वरूप व्यापारिक संतुलन भी अनुकूल हो जायगा।

---

*श्री नेहरू ने अब इसे ६ वर्षीय योजना कर दिया है।